कृषि मूलम् जगत् सर्वम्

कृषि चौपाल

आरएनआई पंजी. सं.
डीईएलएचआईएन/2007/20953

वर्ष-8, अंक-4
जुलाई 2015

₹15

कृषि एवं ग्रामीण विकास को समर्पित हिन्दी मासिक पत्रिका

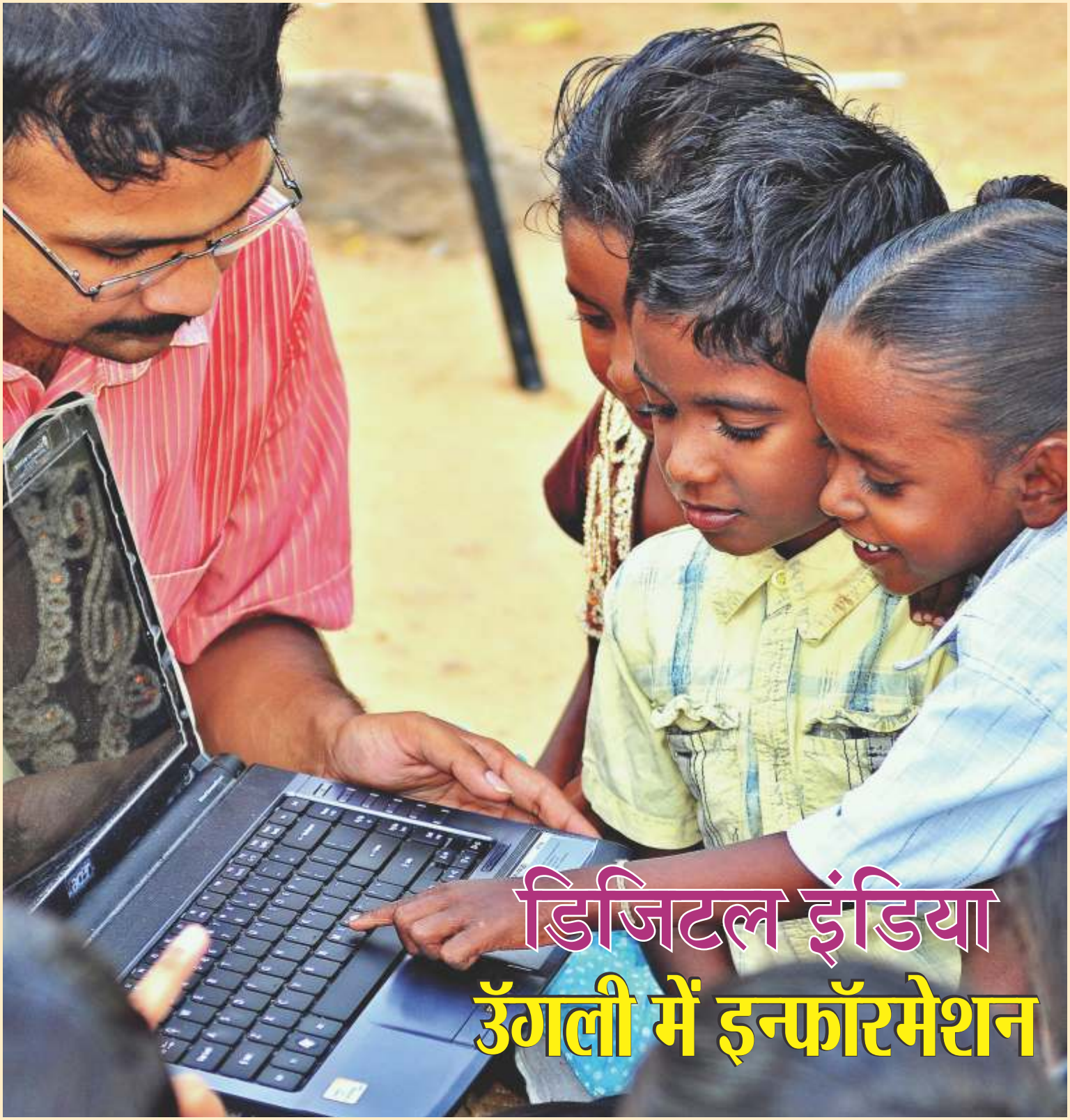

डिजिटल इंडिया
उँगली में इन्फॉरमेशन

Trading New Heights in Event Fabrications

6th Wall
PRODUCTION

Managing the Best Events in the Country

We have manage several event in and out the periphery of Delhi

Always assured of quality work and satisfaction

Delhi Office
Plot No. 1, Gazipur Village
Near Durga Mandir Gazipur
Delhi-110096

Bangalore Office
1St Cross Kanka Nagar,
Siddappa Layout,
Rt Nagar Post, Bangalore-560032

Sudhir Rawat – Chairman & Managing Director

6TH WALL PRODUCTION

Mobile: +91-98100-31447 sudhir@6thwallproduction.com
Email: production@6thwallproduction.com Website: www.6thwallproduction.com

कृषि मूलम् जगत् सर्वम्

कृषि चौपाल

कृषि एवं ग्रामीण विकास को समर्पित हिन्दी मासिक पत्रिका

वर्ष-8 ❖ अंक-4 ❖ जुलाई 2015

संपादक
महेन्द्र सिंह बोरा

सहयोगी संपादक
ताज रावत

विशेष संवाददाता
गणेश चन्द्र पांडे

ब्यूरो प्रमुख (उत्तराखंड)
खुशाल सिंह

डिजाइन
कल्पना प्रिंटोग्राफिक्स

वितरण एवं प्रसार
दलीप जीना

संपादकीय कार्यालय
कृषि चौपाल
सी-355, तृतीय तल, गली नं. 9
वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092

संपर्क: +91 9910406059, 9716407931, 9211915538
ईमेल: krishichaupal@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक महेन्द्र सिंह बोरा द्वारा सी-355, तृतीय तल, गली नं. 9, वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092 से प्रकाशित और मयंक ऑफसेट प्रोसेस, 794/95 गुरु रामदास नगर एक्सटेंशन, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092 से मुद्रित।

'कृषि चौपाल' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त किये गये विचार लेखकों की अपनी अभिव्यक्तियां हैं। संपादकीय मंडल का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

'कृषि चौपाल' में दिये गये विभिन्न उपचारों, सुझावों पर अमल करने पर यदि किसी को किसी प्रकार की क्षति होती है तो इसके लिए 'कृषि चौपाल' को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। सुझाये गये विभिन्न उपचारों और परामर्शों पर अमल करने से पूर्व संबंधित विशेषज्ञों की राय को प्राथमिकता दें।

किसी भी तरह के विवाद का निपटारा दिल्ली/नई दिल्ली की सीमा में आने वाले सक्षम न्यायालयों और फोरमों में ही किया जाएगा।

पत्रिका में प्रकाशित कुछ चित्र इंटरनेट से लिए गये हैं। हम उन सभी छायाकारों का आभार व्यक्त करते हैं।

आवरण चित्र साभार: medialabs.in

● उपरोक्त सभी पद अवैतनिक हैं।

हमेशा हाशिए पर रही किसान राजनीति

हमारे देश की सत्तर प्रतिशत जनता किसान-मजदूर तबके से है। इसके बावजूद देश में किसान राजनीति और मजदूर संघों को मुख्यधारा की राजनीति में कभी भी स्थान नहीं मिल पाया। इतिहास गवाह है कि जब-जब किसानों और मजदूरों ने अपने हितों के संघर्षों के लिए अपने आपको संगठित करने की कोशिश की तब-तब कूटनीति में माहिर राजनेताओं ने इन कोशिशों को या तो नाकाम कर दिया या अपहृत कर लिया। किसान हितों के लिए संघर्षों का भारत में बहुत लंबा इतिहास है। आजादी के तुरंत बाद दक्षिण भारत के तत्कालीन हैदराबाद प्रांत के तेलंगाना में जबर्दस्त किसान संघर्ष हुआ था। उस संघर्ष में भूअधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे कम्युनिस्ट नेता वासुपुन्यया ने आंदोलन का नेतृत्व किया था और अनेक किसान तत्कालीन सरकार की हठधर्मिता के कारण दमनात्मक कार्यवाही में मारे भी गये थे। महाराष्ट्र के 'शेतकारी किसान संगठन' और पंजाब के 'जट्टा पगड़ी संभाल' किसान आंदोलनों को किसान राजनीति के शुरुआती दौर में काफी सुर्खियों में रहे। पूर्व प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह, पूर्व केन्द्रीय मंत्री जॉर्ज फर्नांडीज, पूर्व सांसद डॉ. दत्ता सामंत, दत्तोपंत ठेंगड़ी आदि कुछ प्रमुख नाम हैं जो कि किसानों, कामगारों का नेतृत्व करते हुए राष्ट्रीय राजनीति की मुख्यधारा में शामिल हुए थे। गौरतलब है कि दत्तोपंत ठेंगड़ी ने ही भारतीय मजदूर संघ की स्थापना की थी।

उत्तर प्रदेश के शामली के निकट करमूखेड़ी के नजदीक करीब तीस साल पूर्व बिजली आपूर्ति की लुंजपुज हालत के खिलाफ विशाल किसान आंदोलन हुआ। इसी आंदोलन से भारतीय किसान यूनियन और दमदार किसान नेता स्व. चौधरी महेंद्र सिंह टिकैत का जन्म हुआ। चौ. महेंद्र सिंह टिकैत ने अपने किसान आंदोलन के दौरान अनेक बार दिल्ली में डेरा डाला। यह उनके किसान आंदोलन का ही नतीजा था कि तत्कालीन केंद्र सरकार और उत्तर प्रदेश की राज्य सरकार द्वारा दिल्ली से सिसौली तक रोडवेज की बसों का संचालन किया गया। सिसौली को उस दौरान किसानों की राजधानी के रूप में पहचाना जाने लगा था। चौधरी महेन्द्र सिंह टिकैत के रहते पूर्व केन्द्रीय मंत्री अजीत सिंह तथा सपा प्रमुख मुलायम सिंह यादव अपने आपको कभी भी किसान नेता के तौर पर स्थापित नहीं कर पाये। वर्तमान में राकेश टिकैत ने भारतीय किसान यूनियन की कमान संभाली हुई है, परंतु उनमें वह आग नजर नहीं आती जो उनके पिता स्व. महेंद्र सिंह टिकैत में थी। भूमि अधिग्रहण विधेयक की खिलाफत में भी भाकियू में वह तेवर नहीं दिखायी दिये। यही हाल कमोबेश भारत के अधिकतर मजदूर संगठनों का भी है। अनेक बार कई मजदूर संगठनों के नेताओं पर यह आरोप भी लग चुके हैं कि वे मजदूरों के हितों के खिलाफ प्रबंधन से पैसा लेकर समझौता कर लेते हैं।

यह विडंबना ही कही जायेगी कि देश की 70 प्रतिशत किसान-मजदूर-कामगार आबादी मुख्यधारा की राजनीति में लगभग अछूतों जैसा व्यवहार पा रही है। मुंबई में टेक्सटाइल कामगारों, रेलवे यूनियनों और गोदी कर्मचारियों के आंदोलन और भाकियू द्वारा संचालित सिसौली के आंदोलन को यदि छोड़ दिया जाये तो सत्ता के शीर्ष प्रतिष्ठान ने किसान आंदोलनों और मजदूर आंदोलनों को कभी भी गंभीरता से नहीं लिया। किसान आंदोलनों और मजदूर आंदोलनों की विफलता का प्रमुख कारण यह रहा है कि ये आंदोलनकारी जब वापस अपने गांव जाते हैं तो वहां जाकर हिंदू-मुसलमान-सिख और फिर ब्राह्मण-ठाकुर और फिर अगड़े-पिछड़े में बंट जाते हैं। इसके अलावा आर्थिक स्रोतों की ओर भी इन आंदोलनों ने कभी ध्यान केंद्रित नहीं किया। आज जबकि भूमि अधिग्रहण विधेयक जैसे भूमि लूट के कानून मुंह बाये खड़े हों तथा केंद्र और राज्य सरकारों में विपक्ष की भूमिका भी केवल विरोध करने के लिये विरोध तक सीमित होकर रह गयी हो, किसान और मजदूरों के हितों के संघर्ष की जरूरत शिद्दत से महसूस की जा रही है। किसान और मजदूर संगठन यदि एकता से संघर्ष की राह पकड़ें तो इसमें कोई शक नहीं कि वे एक मजबूत राजनीतिक ताकत के रूप में उभर सकते हैं।

महेन्द्र सिंह बोरा
संपादक

इस अंक में...

कृषि समाचार	02
डिजिटल इंडिया: उँगली में इन्फॉरमेशन	08
सेहत पर एक और खतरा	12
अधिक लाभ के लिए गौ केन्द्रित हो जैविक कृषि	13
ऑकड़ों और प्रयोगों ने किया भारतीय कृषि का सत्यानाश	14
जोखिम से बचने के लिए जरूरी है कृषि बीमा	16
गैर योजनागत दोहन से पैदा हो रहा है जल संकट	18
महंगाई डायन खाये जात है	19
वृक्षारोपण के लिए दिये गये धन का बेजा इस्तेमाल	20
विदेशों में भी कद्र है भारतीयों के हुनर की	21
सिंचाई सुविधाओं को विस्तार देने की कवायद	22
सभी स्कूलों में शौचालय: सरकार की अग्निपरीक्षा	24
मछली पालन और एक्वाकल्चर क्षेत्र में अवसर	26
मूंग की जैविक खेती के लिए जरूरी जानकारी	28
मौसम परिवर्तन का पर्वतीय कृषि पर प्रभाव	30

छज्जे पर बैठी गौरैया
गुमसुम सोच रही
कहां गई आंगन की बैठक
आसन दादी का
बच्चों का कल्लोल
कीमती
सोना चांदी सा
घर क्या बंटा सबके सुइयां कोंच रही
कहां रोज चुग्गा
व्यंजन होली दीवाली में
अब जूठन तक नहीं छोड़ता
कोई थाली में
विस्मित गौरैया अपनी ही किस्मत कोस रही.

–नीलम श्रीवास्तव

समाचार

खेती-किसानी की जानकारियां अब मिल सकेंगी ऑनलाइन

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा उद्घाटित डिजिटल इंडिया योजना का ही असर कहा जायेगा कि कृषि मंत्रालय की योजनाओं को तेजी से ऑनलाइन किया जा रहा है। जैसा कि विभिन्न सूचनाओं को ऑनलाइन करने के मामले में मौजूदा सरकार द्वारा सदा ही तर्क दिया गया है कि इससे सरकार के कामकाज में पारदर्शिता आयेगी। सरकार का मानना है कि योजनाओं को ऑनलाइन करने से किसानों को, उपभोक्ताओं को तथा कृषि से जुड़े अन्य व्यक्तियों और संस्थाओं को कम्प्यूटर-मोबाइल पर उनकी खेती-किसानी और व्यापार आदि से संबंधित जानकारियां मिल सकेंगी। हालांकि यह एक अलग बात है कि भारत के कितने किसान हैं जो मोबाइल या कम्प्यूटर धारक हैं और कितने किसान हैं जो कि मोबाइल या कम्प्यूटर पर इंटरनेट चलाना जानते हैं।

योजनाओं को ऑनलाइन करने की शुरुआत करते हुए कृषिमंत्री राधामोहन सिंह ने जैविक उत्पादों के प्रमाणीकरण, उर्वरक गुणवत्ता नियंत्रण प्रणाली तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड संबंधी तीन वेब पोर्टलों को शुरू किया। इन पोर्टलों पर जैविक उत्पादों के प्रमाणीकरण के साथ-साथ देश भर में जैविक खेती करने वाले किसानों की जानकारी उपलब्ध रहेगी। खेतीबाड़ी से जुड़े छोटे तथा सीमांत अर्थात् दूसरों की जमीनें किराये पर लेकर खेती करने वाले किसानों को सरलता से जैविक प्रमाणपत्र जारी किये जा सकेंगे। घरेलू जैविक खेती के बाजार को रफ्तार देने के लिये सरकार ने कृषि बजट के अंतर्गत जैविक खेती योजना हेतु जारी वित्त वर्ष में 300 करोड़ रुपयों का इंतजाम किया है। जैविक खेती करने वाले 50 छोटे किसानों के समूहों को प्रतिसमूह की दर से 20 हजार रुपये प्रति एकड़ की दर से आर्थिक मदद भी प्रदान की जायेगी। गौरतलब है कि हरित क्रांति के दौरान खेती करने के लिये रासायनिक खादों का अंधाधुंध इस्तेमाल किया गया था, जिसके कारण मिट्टी की गुणवत्ता दुष्प्रभावित हुई और मिट्टी की अपनी स्वाभाविक उत्पादन क्षमता घटती चली गयी। यहां यह भी ध्यातव्य है कि देश के अनेक इलाकों में खेती की जमीन बंजर हो चली है। यही कारण है कि दूसरी हरित क्रांति का नारा देते हुए मौजूदा सरकार ने जैविक खेती को बढ़ावा देना शुरू किया है।

हालिया उद्घाटित उर्वरक गुणवत्ता नियंत्रण प्रणाली पोर्टल पर देश में बनायी गयी खादों और विदेश से मंगायी गयी खादों के नमूना संग्रहण से संबंधित जानकारियां उपलब्ध करायी जा रही हैं। खादों की नमूना जांच तथा मूल्यांकन से जुड़ी अनेक जानकारियां इस वेब पोर्टल पर उपलब्ध रहेंगी। गौरतलब है कि इस समय देश भर में 78 गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशालाऐं विद्यमान हैं। चार प्रयोगशालाओं पर केंद्र का नियंत्रण है जबकि शेष प्रयोगशालाएं विभिन्न राज्यों के अधीन कार्यरत हैं। केंद्र सरकार द्वारा बहुप्रचारित मृदा स्वास्थ्य कार्ड से संबंधित वेब पोर्टल पर खेतों की मिट्टी की गुणवत्ता की जांच से संबंधित जानकारियां उपलब्ध रहेंगी। वह जमीन जो सिंचित क्षेत्र के अंतर्गत आती है उसके 2.5 हेक्टेयर और जो असिंचित है उसके 10 हेक्टेयर रकबे से मिट्टी की जांच के लिये नमूने जमा किए जायेंगे। नमूनों की वैज्ञानिक जांच के बाद किसानों को उनकी जमीन के मृदा स्वास्थ्य कार्ड जारी होंगे। मृदा स्वास्थ्य कार्ड से जुड़ा हुआ किसान अपनी काश्तकारी वाली जमीन पर उसकी मिट्टी की गुणवत्ता के अनुसार खेती कर सकेगा और खादों, कीटनाशकों आदि का इस्तेमाल कर सकेगा।

विकास की दौड़ में पिछड़ती ग्रामीण अर्थव्यवस्था

अंतर्राष्ट्रीय रेटिंग संस्था-मूडीज इन्वेस्टर्स सर्विसेज ने भारत के गांवों की अर्थव्यवस्था की जो तस्वीर अपने हालिया जारी प्रतिवेदन में पेश की है, वह गांवों की लुंज-पुंज अर्थव्यवस्था को दर्शाती है। इस संस्था द्वारा किये गये अध्ययनों के बाद जारी की गयी ताजा रिपोर्ट में यह स्पष्ट किया गया है कि मौजूदा वित्त वर्ष में भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था इसी प्रकार लुंजपुंज बनी रहेगी। यह तथ्य भारत सरकार और देश के बैंकों की वित्तीय साख के विपरीत है।

इस प्रतिवेदन का यह भी कहना है कि लोगों में मोदी सरकार की अगुआई में आर्थिक सुधारों की प्रगति को लेकर भी अनेक शंकाऐं पैदा हुई हैं। मूडीज इन्वेस्टर्स सर्विसेज द्वारा 'आंतरिक इण्डिया' शीर्षक से जारी किये गये इस प्रतिवेदन में, हालांकि आर्थिक वृद्धि को लेकर जतायी गयी संभावनाऐं सकारात्मक हैं परंतु यहां पर यह नहीं भूलना चाहिये कि देश की आर्थिक वृद्धि दर, गांवों के विकास की सही तस्वीर पेश नहीं करती है। दरअसल हम यह भूल कहें, या फिर इसे गांवों के प्रति उपेक्षा कहें जिसे हम निरंतर करते चले आ रहे हैं कि सेंसेक्स की प्रगति को देश के विकास का सूचकांक मान लेते हैं। मूडीज द्वारा हालिया जारी प्रतिवेदन में भारत की अर्थव्यवस्था को जी-20 देशों में सबसे ऊपर आंकते हुए जारी वित्त वर्ष में इसकी वृद्धिदर 7.5 अनुमानित की गयी है। बहरहाल इस संस्था ने विगत माह अपने अध्ययन को लेकर जो वोटिंग करायी, उसमें प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की सरकार के अंतर्गत, सुधारों की तेजी को लेकर कुछ निराशाएं व्यक्त की गयी हैं। सरकार की नीतियों में स्थिरता रहने के जोखिम के संदर्भ में भी चिंताएं बढ़ी हैं।

इस अध्ययन के दौरान मतदान या रायशुमारी में शामिल लगभग 50 फीसद लोगों का कहना था कि सुधारों की धीमी रफ्तार भारत जैसे विशाल देश की अर्थव्यस्था में सबसे बड़ा जोखिम है। इस प्रतिवेदन में मूडीज ने अपनी राय जाहिर करते हुए कहा है कि भारत की बहुदलीय राजनीतिक व्यवस्था और संघीय ढांचे का लोकतंत्र नीतिगत क्रियान्वयन की रफ्तार को प्रभावित करता है। प्रतिवेदन में कई नीतियों को भारत की संस्थागत मजबूती हेतु सकारात्मक करार दिया गया है। इन नीतियों के तहत् आर्थिक वृद्धि दर को बढ़ाने हेतु अमल में लाये जा रहे सुधारों का प्रभाव भविष्य में कई सालों बाद दृष्टिगोचर होगा। स्पष्ट है कि गांवों तक विकास और वर्तमान नीतियों के परिणामों को पहुंचने में अभी और वक्त लगेगा।

यह वाकई चौंकाने वाली बात है कि देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में ग्रामीण अर्थव्यवस्था की हिस्सेदारी 35 फीसद होने के बावजूद गांवों का विकास आजादी के लगभग आठ दशकों बाद भी शहरों के मुकाबले निरंतर पिछड़ता जा रहा है। न तो गांवों से शहरों की ओर होने वाले पलायन को रोका जा सका है, और न ही ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत किया जा सका है। स्मार्ट सिटी के निर्माण की ओर बढ़ रहे भारत को गांवों की ओर भी मुड़कर देखना चाहिए।

हिमाचल-उत्तराखंड में दुर्लभ मत्स्य प्रजातियां खतरे में

हिमाचल में ट्राउट मछली का भविष्य खतरे में पड़ता जा रहा है। जबकि इस मछली के शिकार पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगा हुआ है। इसकी संख्या में कमी आने का एक कारण जलप्रदूषण एवं बाढ़ में आया गाद है जो इन मछलियों पर विपरीत प्रभाव डालता है। दूसरी ओर भूमंडल में बढ़ती गरमाहट से भी ट्राउट मछलियों की आबादी में कमी आयी है। ट्राउट मछलियां ठंडी जलवायु की मछलियां हैं।

हिमाचल प्रदेश में ट्राउट मछली पर कई अनुसंधान कार्य भी चल रहे हैं। कुछ स्थलों पर ट्राउट मछलियों को पूरी तरह संरक्षण दिया गया है और उनकी आबादी में बड़ी तेजी के साथ वृद्धि हो रही है हिमाचल में ट्राउट को बचाने के लिए जन अभियान, मत्स्यसंवर्द्धन तथा आयेटक संस्था (एनजीओ) आगे आए हैं पालीकुहल कुल्लू में इन संस्थाओं को समर्थन मिला है।

उत्तराखंड मत्स्य जीव: उत्तराखंड में मत्स्य जीवों को बचाने के प्रयास तेज हो गए हैं, विशेषकर ट्राउट मछली को बचाने के लिए व्यापक प्रयास किए जा रहे हैं। इनमें कई एनजीओ इस दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं।

पाबौ नदी में ट्राउट और गैड़ मछली को बचाने के लिए विगत दो दशकों में व्यापक प्रयास किए जा रहे हैं। इसी प्रकार सौंग नदी में चांदी मछली, मगर मछली तथा मूंछ मछलियों को बचाने के प्रयास तेज किए जा रहे हैं। टोया नदी दलदल में पायी जाने वाली झींगा मछली व आसपास के पर्यावरण को बचाने के लिए स्वैच्छिक संगठनों के कार्यकर्त्ता अच्छे प्रयास कर रहे हैं। यहा पर मांउटेन रिसर्च फांउडेशन संस्था इन मछलियों को बचाने के लिए आगे आयी हैं।

रिंगाली घास, कमलिया तथा मॉस खतरे में: समस्त पर्वतीय क्षेत्र हिमाचल, उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, भूटान, नेपाल एवं सिक्किम में रिंगाली घास जो कि बांस प्रजाति में सबसे छोटी बांस है और तीन से पांच इंच तक उगती है की प्रजातियां खतरे में पड़ गयी हैं। बढ़ती गरमाहट से रिस्ते हुए जल क्षेत्र सूख गए हैं। पर्वतीय घाटियों की नमी में कमी आयी है। क्योंकि इन घाटियों में अब 14-15 फुट तक बर्फ नहीं गिरती है। अब यह 3-4 फुट तक ही गिरती है अत: घाटियों की नमी देर तक नहीं बनी रहती है। ऊंचे पहाड़ों पर जलस्रोत सूखकर नष्ट हो गए हैं। इसके अलावा दूधिया, कमलिया तथा मॉस की प्रजातियां खतरे में पड़ गयी हैं। क्योंकि यह रिस्ते हुए जल, नमीयुक्त भूभाग तथा छायदार घाटियों में अधिक वृद्धि करती है। लेकिन बढ़ती गरमाहट ने इनके उपज क्षेत्रों को नष्ट कर दिया है।

दिल्ली में अवैध निर्माण की भेंट चढ़ गयी सैकड़ों हैक्टेयर कृषि भूमि

हाल ही में मुजफ्फरनगर तथा जींद तक के भू-भाग को राजधानी के एनसीआर का हिस्सा बनाये जाने की जोरशोर से घोषणा की गयी। केंद्र सरकार की इस घोषणा से हालांकि प्रत्येक वर्ग के लोग खुश होंगे परंतु यह घोषणा जब अपना भौतिक आकार ग्रहण करेगी तब शायद अभी खुश होने वाले अनेक लोग अपने आप को तब कोस रहे होंगे क्योंकि दिल्ली एनसीआर के विस्तारीकरण के लिये जो भूमि किसानों से अधिगृहीत की जायेगी वह भवन निर्माताओं को दे दी जायेगी और भवन निर्माता तथा प्रॉपर्टी डीलिंग की आड़ में सक्रिय सम्पत्ति क्रय-विक्रय के बिचौलिये मालामाल होंगे। राज्य का कृषिक्षेत्र और वन क्षेत्र भी सिकुड़ जायेगा। पर्यावरण संरक्षण की बात करना तो अब दिल्ली शहर के प्रदूषण के स्तर को जानकर बेमानी लगता है भविष्य में एनसीआर के विस्तार से यह और प्रदूषित होगा यह भी निश्चित है।

ताजा अध्ययनों के मुताबिक विगत एक साल के अंदर दिल्ली की 1267 हेक्टेयर काश्तयोग्य जमीन खत्म हो गयी। वर्तमान में दिल्ली एनसीआर का क्षेत्रफल 51,109 वर्ग किमी है। वर्ष 2012-13 के दौरान लगभग 35,130 हेक्टेयर क्षेत्रफल में खेतीबाड़ी की जा रही थी। जबकि वर्ष 2011-12 में लगभग 36,450 हेक्टेयर क्षेत्रफल में काश्तकारी हो रही थी। मात्र एक वर्ष के दौरान लगभग 1270 हेक्टेयर कृषियोग्य भूमि का समाप्त हो जाना यह दर्शाता है कि राजधानी में वैध और अवैध निर्माण कार्यों के लिये कृषि भूमि का भारी पैमाने पर उपयोग किया गया। राजधानी में सबसे ज्यादा कृषि भूमि अवैध शहरीकरण की भेंट चढ़ती रही है। जबकि वर्ष 2012 में तत्कालीन दिल्ली सरकार द्वारा शहर में बसी हुई 895 अनधिकृत कालोनियों को नियमित करने की घोषणा की गयी। भले ही यह घोषणा मतदाताओं को लुभाने के लिये की गयी हो, परंतु इस घोषणा से यह भी संदेश देने का प्रयास किया गया था कि राजधानी में भविष्य में अनधिकृत कालोनियों के निर्माण पर रोक लगा दी जायेगी। सरकारी रोक के बावजूद अनधिकृत मानव बस्तियां बसने का क्रम राजधानी में अनवरत् जारी है। यह अनधिकृत कालोनियां जहां भू-माफियाओं द्वारा मोटी कमाई के लालच में बसायी जाती है, वहीं इन कालोनियों के बाशिंदे सुविधाओं के अभाव में काफी जोखिम में (खासकर स्वास्थ्य के मामले में) जीवन बसर करते हैं।

वर्तमान हालात यह हो चुके हैं कि यदि यह सिलसिला ऐसा ही जारी रहा तो भविष्य में दिल्ली की कृषियोग्य जमीन पर केवल अवैध निर्माण ही नजर आयेंगे तथा खेत और किसान दिल्ली के इतिहास में सिमट कर रह जायेंगे।

काश्तयोग्य जमीन पर अवैध निर्माण के संदर्भ में एक खास बात यह है कि सरकारी ऑकड़ों में दिल्ली में इन अनधिकृत मानव कालोनियों की संख्या 1600 है। वास्तविकता यह है कि इन अवैध कालोनियों की संख्या इससे भी ज्यादा है और इनका बनाया जाना अभी भी जारी है। दिल्ली के राजस्व विभाग के सूत्रों से मिली जानकारी के अनुसार 1981 से 1991 के दशक के दौरान दिल्ली में बड़ी तेजी से अनधिकृत कालोनियों का निर्माण और फैलाव हुआ। इस दशक के दौरान दिल्ली के काश्तकारी रकबे में लगभग 24 फीसद की गिरावट आयी। राजस्व विभाग का भी मानना है कि रातोंरात मोटी कमाई पर अमीर बनने के सपने देखने-दिखाने वालों द्वारा ही अनधिकृत कालोनियों का निर्माण किया जाता रहा है।

अनधिकृत कालोनियों के विस्तार का खामियाज इन जगहों पर रह रहे लोगों को ही भोगना पड़ता है। अनेक बार तो इन लोगों को हटाये जाने का मुआवजा भी सरकार नहीं देती है। अनधिकृत कालोनियों के विस्तार का प्रमुख कारण यह है कि इस प्रकार के मामलों में पुलिस आइपीसी की धारा 188 (किसी सरकारी अधिकारी की आज्ञा का उल्लंघन) तथा दिल्ली नगर निगम अधिनियम की धारा 461 व 466 के तहत् मामला दर्ज कर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर लेती है। बाद में मामला अदालतों में चिरपरिचित विलंबित गति से चलता रहता है। ये धाराऐं किसी भी प्रकार की सजा के ठोस प्रावधानों से रिक्त हैं। समूची दिल्ली में इस प्रकार के अवैध निर्माणों को जब तक नहीं रोका जायेगा तब तक दिल्ली की तस्वीर को भी नहीं बदला जा सकता है और ना ही कृषि भूमि को बचाया जा सकेगा।

जन औषधि केन्द्रों से मिलेगी किफायती दामों पर दवाएं

राजधानी स्थित भारतीय आयुर्विज्ञान संगठन के मुख्यालय में लोगों को किफायती दामों पर दवाऐं उपलब्ध कराने के लिये 'जन औषधि' दुकान शुरू की गयी है। गौरतलब है कि भारत में आज भी आर्थिक-सामाजिक विषमता के कारण स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ केवल साधन संपन्न लोग ही उठा पाते हैं। ऐसे में महंगी दवाओं को खरीदना एक औसत आय के परिवार या व्यक्ति के लिये काफी खर्चीला साबित होता है। महंगी दवाओं को बाजार कीमत से 80 से 90 फीसद तक सस्ते दामों पर उपलब्ध कराने के नजरिये, दिल्ली स्थित आइएमए (इंडियन मेडिकल एशोसिएशन) की मुख्यालय से जन औषधि दुकान की शुरूआत की गयी है। विगत दिनों इस दुकान का उद्घाटन केंद्रीय रसायन और उर्वरक राज्य मंत्री हंसराज गंगाराम अधीर द्वारा किया गया। श्री अधीर ने उद्घाटन अवसर पर कहा कि पूरे देश में इस प्रकार के लगभग 50 हजार जन औषधि केंद्र बहुत जल्द खोले जायेंगे। इस साल तीन हजार केंद्र खोले जायेंगे। इससे लोगों को सस्ती दवाएं मिल पाएंगी। सरकार इस योजना को प्रधानमंत्री जन औषधि योजना के नाम से नए सिरे से शुरू करेगी। ताकि इन दुकानों की संख्या बढ़ाई जा सके।

आइएमए जन औषधि सेंटर में केंद्र सरकार के जन औषधि विभाग द्वारा प्रमाणित दवाएं उपलब्ध होंगी। यह स्टोर सप्ताह के सातों दिन सुबह साढ़े नौ बजे से शाम साढ़े छह बजे तक खुला रहेगा। स्टोर में अलग-अलग बीमारियों की 118 दवाएं उपलब्ध हैं, जिसमें एंटीबायोटिक, सीरप, दर्द, डिप्रेशन, ब्लड प्रेशर, हृदय की बीमारियों, कालेस्ट्राल, डायरिया, दस्त, गैस्ट्रिक, बुखार आदि की दवाएं उपलब्ध होंगी।

अमेरिकी चिकन से भारतीय मुर्गी उद्योग को खतरा

वर्ष 2007 में जानलेवा और संक्रामक बर्ड फ्लू वायरस अमेरिका में फैलने के बाद भारत ने वहां के कई कृषि उत्पादों पर रोक लगा दी थी। अमेरिका इस मामले को चुनौती देते हुए मार्च 2012 में इसे डब्ल्यूटीओ की अदालत में ले गया था। हाल ही में भारत यह केस हार गया है। इससे जल्द ही भारत में बेहद सस्ता अमेरिकी चिकन बिकने लगेगा। संभावना है कि इससे घरेलू बाजार में चिकन की कीमतों में 50 फीसद से अधिक कमी होगी जिससे उपभोक्ताओं को काफी फायदा होगा। लेकिन इससे भारतीय चिकन कारोबारियों को खासा नुकसान होगा। भारतीय मांस कारोबार के लिए यह नुकसान सीधे तौर पर 15 फीसद तक हो सकता है। दरअसल, पिछले महीने ही भारत विश्व व्यापार संगठन की अपीली अदालत में अमेरिकी मुर्गी पालन उद्योग के उत्पादों के आयात पर कई सालों से जारी प्रतिबंध लगाने का केस हार गया है। भारत को मंजूरी बहाल करने के विषय में अपना निर्णय डब्ल्यूटीओ की विवाद का निपटारा करने वाली अदालत को अगले दो हफ्ते में देना है। भारतीय मांस उद्योग से संबंधित मंत्रालय के एक अधिकारी के अनुसार, अब भारत के

पास अमेरिकी मुर्गी पालन उद्योग के उत्पादों का आयात फिर से बहाल करने के लिए इस वर्ष जुलाई से अगले 15 महीने का अधिकतम समय है। इसकी शुरुआत समय सीमा खत्म होने से काफी पहले शुरू होने की उम्मीद है। अमेरिकी कारोबार शुरू होने से भारतीय मुर्गीपालन उद्योग को खासा धक्का लगेगा। इस उद्योग के लोगों का कहना है अगर अमेरिका से आयातित मुर्गे का मांस खासकर लेग पीस, पर लगा प्रतिबंध हटा लिया जाए तो अमेरिका को सालाना 30 करोड़ डॉलर (करीब 1906 करोड़ रुपये) का फायदा होगा। इस मुनाफे का प्रतिशत भी आगे बढ़ेगा क्योंकि भारत में साल दर साल उच्च प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थों की मांग बढ़ती जा रही है। हालांकि, मुर्गी पालन से जुड़े भारतीय किसानों को अमेरिकी उत्पादों के आने से खासा नुकसान होगा। भारत में भी मुर्गे की टांग की कीमत अभी 250 रुपये प्रति किलो है। लेकिन, यही अमेरिकी उत्पाद मंजूरी के बाद भारत में इससे भी आधी से भी कम कीमत में बिकेंगे। चूंकि अमेरिका फ्रोजन चिकेन का बड़ा भंडार भारत में उतारने को तैयार बैठा है। अमेरिका से आई लेग पीस सीधे तौर पर भारत के मुर्गी पालन उद्योग का 15 फीसद नुकसान करेगी। देश के पशुपालन उद्योग संघ के अध्यक्ष जगबीर सिंह धुल ने कहा कि इससे मुर्गी पालन उद्योग को हर साल 800 अरब रुपये का नुकसान होगा। अब ब्रांडेड फूड चेन जैसे मैकडॉनल्ड और केएफसी इस आयातित मुर्गे को अवश्य खरीदेंगे। धुल ने बताया कि भारत में मटन के बजाय चिकेन की खपत अधिक है। अभी भी प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति चिकन की खपत 4 किलोग्राम है। जबकि पूरे विश्व में इसका औसत 15-18 किलोग्राम है।

जीवनभर साथ चलेगा एक ही मोबाइल नंबर

अब लोगों को जगह बदलने की वजह से मोबाइल नंबर नहीं बदलना पड़ेगा। आप भारत में कहीं भी निवास बदल लें, इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा। आप अपनी मर्जी से अपने सर्विस ऑपरेटर को बदल सकते हैं। डिजिटल इंडिया के लिए यह बेहद आवश्यक था। सच तो यह है कि आज मोबाइल नंबर आदमी की पहचान बन गया है। कई तरह की सुविधाएं मोबाइल पर आधारित हो गयी हैं। अनेक सुविधाओं का लाभ लेने के लिए सबसे पहले मोबाइल नंबर की जरूरत होती है। उसका बार-बार बदलना बहुत झंझट का काम था। अब एक मोबाइल नंबर जिंदगी भर आपका साथ देगा।

करीब डेढ़ साल के इंतजार के बाद पूरे देश में नेशनल मोबाइल नंबर पोर्टेबिलिटी (एनएमएनपी) को 3 जून को लागू कर दिया गया। अब उपभोक्ताओं को एक राज्य या सर्किल से दूसरे राज्य या सर्किल में स्थायी तौर पर जाने पर मोबाइल नंबर बदलने की जरूरत नहीं होगी। जीवन भर व्यक्ति एक ही मोबाइल नंबर रख सकता है। इससे पहले एमएनपी का दायरा एक मोबाइल सर्किल के बीच ही ऑपरेटर बदलने पर अपना वही नंबर बनाये रखने की सुविधा थी। दूरसंचार विभाग ने पहले ही कह दिया था कि 3 जुलाई से एमएनपी को लागू कर दिया जाएगा।

बीएसएनएल, एमटीएनएल, एयरटेल, वोडाफोन, आइडिया और रिलायंस कम्युनिकेशन ने सरकार की घोषणा के दिन ही नेशनल मोबाइल नंबर पोर्टेबिलिटी (एनएमएनपी) शुरू कर दी थी। एमटीएस ब्रांडनेम से सर्विस देने वाली सिस्टेमा श्याम टेलीसर्विसेस, यूनिनॉर और वीडियोकॉन टेलिकॉम जैसे बाकी प्राइवेट सर्विस प्रोवाइडर्स ने भी जल्द ही सेवा शुरू करने की बात कही।

पूरे देश में एनएमएनपी सुविधा का फायदा यह है कि एक जगह से दूसरी जगह स्थानांतरण या किसी कारण से स्थायी तौर पर जाने के बावजूद उपभोक्ता का मोबाइल नंबर नहीं बदलेगा। उपभोक्ता किसी भी दूसरे सर्किल या राज्य में किसी भी दूसरी कंपनी की सेवा लेने को आजाद होगा। इससे मोबाइल कंपनियों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी। कंपनियों पर सेवा की गुणवत्ता को बनाने का दबाव रहेगा। इसका फायदा ग्राहक को मिलेगा।

ऐसे ले सकते हैं सुविधा

- मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाएं और टाइप करें PORT फिर स्पेस देकर अपना मोबाइल नंबर लिखें और 1900 पर भेज दें।
- थोड़ी देर बाद आपके मोबाइल पर एक 8 अंकों का यूनीक कोड आएगा।
- यूनीक कोड को पोर्टेबिलिटी के तय फॉर्मेट और कस्टमर एप्लीकेशन फॉर्म के साथ कंपनी के आउटलेट पर जमा कराना होगा।
- फॉर्म जमा कराने के बाद आपके खाते से 19 रुपए काट लिए जाएंगे।
- इसके बाद पुराना बिल (यदि बाकी है) का आपको भुगतान करना होगा। इसके बाद नई सिम मिलेगी।
- फिर नेटवर्क शिफ्टिंग का एसएमएस मिलेगा और मोबाइल कंपनी बदल जाएगी।
- प्रीपेड यूजर्स बैलेंस ट्रांसफर और पोस्टपेड यूजर्स कैरी फॉरवर्ड करा सकेंगे।

सोलर पंप से बिजली बनाकर किसान ने कायम की मिसाल

आइडब्ल्यूएमआइ के निर्देशन में रमणभाई ने हालिया दिनों तक केवल चार माह के भीतर 1500 यूनिट बिजली बेचकर 7500 रुपये की आय की है। इस कार्यक्रम पर कार्य कर रही संस्था अंतर्राष्ट्रीय जल प्रबंधन संस्थान की राय है कि रमणभाई के साथ किये गये सफल परीक्षण को सरकार द्वारा नीतिगत रूप से विस्तार दिया जाना चाहिये जिससे कि किसान, पर्यावरण और पानी तीनों का संरक्षण किया जा सके।

मौजूदा दौर में कृषि को घाटे का सौदा मानते हुए जहां अनेक युवा किसान अन्य व्यवसायों और सेवाओं की ओर उन्मुख हो रहे हैं वहीं उम्र दराज हो चले रमण भाई परमार ने खेतीबाड़ी से न केवल नयी आशाऐं जगायी हैं बल्कि वह देश के पहले सौर ऊर्जा किसान का खिताब पा चुके हैं। गुजरात के आणंद जिले के बामणा गांव के किसान रमणभाई परमार ने सौर ऊर्जा से चलने वाले एक सिंचाई पंप को बिजली के ग्रिड से जोड़कर अनाज के साथ ही बिजली भी पैदा करने का कारनामा कर दिखाया है। उन्होंने यह कारनामा इंटरनेशनल वाटर मैनेजमेट इंस्टीट्यूट (आइडब्ल्यूएमआइ) के सहयोग तथा मार्गदर्शन में किया।

रमणभाई परमार ने कृषिक्षेत्र के दिन-दिन बोझिल होते परिदृश्य में अपनी प्रगतिशील सोच से जान फूंकने का काम करते हुए मिसाल कायम की है। यह साधारण तथ्य तो सभी जानते हैं कि खेती और पानी का चोली-दामन का साथ है। आज के दौर में वैश्विक स्तर पर अनेक देशों में खेती और पानी की बचत की अवधारणा पर काम हो रहा है। यह अवधारणा इस केंद्रीय विचार पर आधारित है कि पानी की कम से कम बर्बादी पर अच्छी से अच्छी फसल पैदा की जाय। गौरतलब है कि भारत सरकार सौर ऊर्जा से चलने वाले पंपों पर काफी सब्सिडी दे रही है। हालांकि यह सिंचाई का सस्ता, सुलभ और स्वच्छ तरीका है, लेकिन सिंचाई के लिये तथा पेयजल के लिये पानी की किल्लत झेल रहे भारत के दक्षिणी और पश्चिमी इलाके में इन सौर ऊर्जा चालित पंपों के भूजल स्तर में गिरावट की आशंका जतायी जा रही थी। किसी हद तक यह आशंका सच भी है कि भारत के अनेक इलाकों में भूजल के अंधाधुंध इस्तेमाल से इसका स्तर चिंताजनक स्थिति तक गिरा है। क्योंकि किसान को खेतीबाड़ी में और किसी तरफ से सहयोग की आशा तो होती नहीं, इसलिये वह ज्यादा से ज्यादा सिंचाई कर अपने खेतों से अच्छी पैदावार लेने की आकांक्षा रखता है। कई किसान अपने नलकूपों और सौर ऊर्जा चालित पंपों से दूसरे किसानों को भी सिंचाई उपलब्ध करवाकर थोड़ा-बहुत आय भी कर लेते हैं।

गिरते हुए भूजल स्तर को संभालने के लिए आइडब्ल्यूएमआइ ने सौर ऊर्जा कार्यक्रय के तहत बिजली खरीदने का प्रस्ताव भी प्रस्तुत किया। इस प्रस्ताव के अनुसार यह पेशकश की गयी कि जब कोई किसान सिंचाई नहीं कर रहा हो तो उस स्थिति में वह अपने सोलर पंप की बिजली को बेचकर लाभ अर्जित कर सकता है। इस संस्था ने अपने अनुसंधानों से यह निष्कर्षित किया कि यदि किसानों के पास अतिरिक्त आय हेतु बिजली बेचकर लाभ कमाने का विकल्प हो तो उन्हें बिजली और पानी के महत्व के परिप्रेक्ष्य में इनका उपयोग उचित ढंग से करने के लिये काफी कारगर तरीके से प्रोत्साहित किया जा सकेगा। यानि इस स्थिति में किसान अपनी किसी अन्य फसल की ही भांति सौर ऊर्जा का उत्पादन कर उसे विक्रय करेंगे। संस्था ने इस कार्यक्रम के तहत बिजली की कीमत पांच रुपया प्रति मिनट तय की।

आइडब्ल्यूएमआइ के निर्देशन में रमणभाई ने हालिया दिनों तक केवल चार माह के भीतर 1500 यूनिट बिजली बेचकर 7500 रुपये की आय की है। इस कार्यक्रम पर कार्य कर रही संस्था अन्तर्राष्ट्रीय जल प्रबंधन संस्थान की राय है कि रमणभाई के साथ किये गये सफल परीक्षण को सरकार द्वारा नीतिगत रूप से विस्तार दिया जाना चाहिये जिससे कि किसान, पर्यावरण और पानी तीनों का संरक्षण किया जा सके। वर्तमान में आणंद सहित मध्य गुजरात में जल प्रबंधन के क्षेत्र में विगत एक दशक के दौरान आइडब्ल्यूएमआइ ने सिंचाई हेतु भूमिगत जल खीचने में सौर ऊर्जा के इस्तेमाल करने की परियोजना पर काम करते हुए काफी सकारात्मक परिणाम प्राप्त किये हैं। संस्था ने अपने इस कार्यक्रम को सोलर पॉवर ऐज एरेम्यूनरेटिव क्राम (स्पार्क) नाम दिया है। संस्था का कहना है कि एक हेक्टेयर में 13 हजार यूनिट सौर ऊर्जा संयत्र स्थापित कर साल में एक करोड़ रुपये तक की आय संभव है।

- **देश में बिजली और डीजल के कुल पंपों की वर्तमान संख्या लगभग दो करोड़ है। इन पंपों की जगह यदि सौर ऊर्जा पंपों का प्रयोग किया जाय तो कुल कार्बन के उत्सर्जन में 6 फीसदी सालाना दर से कमी की जा सकती है।**
- **सौर ऊर्जा की मदद से खेती से तिहरे फायदे लेने का यह अनोखा उदाहरण है, जहां एक ही कार्य से किसान, पर्यावरण और पानी तीनों का संरक्षण भी हो रहा है।**

पूर्वी राज्यों से होगी दूसरी हरित क्रांति की शुरूआत

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कृषि क्षेत्र के विकास के लिये अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए, भारत के पूर्वोत्तर राज्यों की भूमिका को इस हेतु महत्वपूर्ण करार दिया। हाल ही में झारखण्ड के हजारीबाग जिले के बरही के गोरियाकारमा में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का शिलान्यास करते हुए श्री मोदी ने कहा कि दूसरी हरित क्रांति की शुरुआत पूर्वोत्तर भारत से होगी। उन्होंने दूसरी हरित क्रांति को वर्तमान की मांग बताते हुए कहा कि पूर्वी उत्तर प्रदेश, झारखण्ड, बिहार, पश्चिम बंगाल, ओड़िसा, असम अरुणाचल आदि पूर्वोत्तर सूबे इस क्रांति के वाहक बनने जा रहे हैं।

गौरतलब है कि मौजूदा राजग सरकार पूर्वोत्तर राज्यों के विकास को लेकर सचेत है तथा इस मामले में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की दिलचस्पी भी शामिल है। वह पूर्वोत्तर राज्यों के विकास पर अतिरिक्त ध्यान केंद्रित करने की नीति पर चल रहे हैं। यही कारण हैं कि उन्होंने पूर्वोत्तर राज्यों की अनेक यात्राऐं भी अपने शासनकाल में की हैं। झारखण्ड के हजारीबाग जिले में कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना किया जाना उनकी पूर्वोत्तर नीति का ही एक और कदम है। विगत एक दशक के दौरान इन राज्यों की सीमाओं के नजदीक स्थित चीन के भूभाग में चीन की बढ़ती दखलंदाजी तथा विभिन्न निर्माण व विकास कार्यो की गतिविधियों में आयी तेजी पर भी राजग सरकार पैनी निगाह रखे हुए है। पिछले दिनों भारतीय सेना द्वारा म्यांमार में आतंकवादियों के खिलाफ की गयी निरोधक कार्रवाई को भी प्रधानमंत्री श्री मोदी की पूर्वोत्तर नीति का ही सफल परिणाम माना जा रहा है।

किसानों को बेहतर अनुसंधान के साथ बेहतर खेती करने के लिये अच्छे स्तर की खाद और बीज आदि की भी आवश्यकता होती है। प्रधानमंत्री श्री मोदी ने कृषि की इन आवश्यकताओं के मद्देनजर झारखण्ड राज्य के सिंदरी में बंद पड़े कारखाने को भी दुबारा शुरू करने का ऐलान किया है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की स्थापना के अवसर पर आयोजित समारोह को संबोधित करते हुए उन्होंने आगे कहा कि खेती और हमारा शरीर एक जैसा ही होता है। जिस तरह शारीरिक आधि-व्याधि का निदान करने के लिये जांच करने हेतु प्रयोगशाला का सहारा लिया जाता है, वैसे ही हमें मिट्टी के स्वास्थ्य की भी जांच करने की परंपरा अपनानी होगी। उन्होंने सरकार की देशव्यापी मृदा हैल्थ कार्ड

हाल ही में झारखण्ड के हजारीबाग जिले के बरही के गोरियाकारमा में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का शिलान्यास करते हुए श्री मोदी ने कहा कि दूसरी हरित क्रांति की शुरुआत पूर्वोत्तर भारत से होगी। उन्होंने दूसरी हरित क्रांति को वर्तमान की मांग बताते हुए कहा कि पूर्वी उत्तर प्रदेश, झारखण्ड, बिहार, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, असम, अरुणाचल आदि पूर्वोत्तर सूबे इस क्रांति के वाहक बनने जा रहे हैं।

योजना का जिक्र करते हुए, युवाओं से मृदा स्वास्थ्य जांच की तकनीक सीखने के लिये आगे आने का आह्वान किया। श्री मोदी ने कहा कि किसानों को इस सोच से बाहर निकलना होगा कि खेत में लबालब पानी भर देने से ही खेती बढ़िया होगी, जिस प्रकार कि किसी बच्चे को दूध से नहलाने से बच्चे की सेहत नहीं सुधर सकती। मोदी ने कहा कि प्रत्येक क्षेत्र की खेत की अलग-अलग प्रकृति होती है। केरल का फॉर्मूला झारखण्ड में खेती के मामले में लागू नहीं किया जा सकता। उन्होंने पानी का महत्व समझाते हुए उसके एक-एक बूंद का उपयोग करने की नसीहत दी।

श्री मोदी ने पीएम सिंचाई योजना का जिक्र करते हुए कहा कि हर साल बिहार में चार सौ करोड़ रुपये मूल्य की मछली बाहर के राज्यो से आती है। यदि बिहार में मछली पालन को बढ़ावा दिया जाये तो इतनी पूंजी राज्य कमा सकता है। उन्होंने इस मौके पर पशुपालन को खेती में महत्वपूर्ण मानते हुए स्पष्ट किया कि हमारे देश में दुधारू पशु ज्यादा हैं परंतु दुग्ध उत्पादन विदेशों के मुकाबले काफी कम है। कई देशों में दुधारू पशु तो संख्या में कम होते हैं परंतु प्रति पशु दुग्ध उत्पादकता में वे देश हमसे कहीं आगे हैं। श्री मोदी ने इस बात पर जोर दिया कि उपलब्ध जमीन में ही अधिकतम पैदावार ली जा सके ताकि देश का पेट भी भरे और किसान की जेब भी भरे। इस अवसर पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कृषक-मित्र की छवि में स्वयं को प्रस्तुत करते नजर आये। उन्होंने राजनीतिक चर्चा भी नहीं की और विपक्ष पर भी ज्यादा निशाना नहीं साधा। सिर्फ इतना जिक्र भर किया कि पिछली सरकार ने किसानों को उनकी नियति पर छोड़ दिया था। यहां भी वह अपने अंग्रेजी प्रेम को दर्शाते नजर आये। सिंचाई योजनाओं का जिक्र करने पर उन्होंने 'वन ड्रॉप-मोर क्राप' का जुमला गढ़ा।

केंद्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना और अन्य कृषि महाविद्यालयों की स्थापना की घोषणा और आरोपों तथा सफाईयों को बिहार में होने वाले विधानसभा चुनावों के परिप्रेक्ष्य में भी देखा जा रहा है। यह भी हो सकता है कि केंद्र सरकार आसन्न विधानसभा चुनावों में बढ़त बनाने के लिए संसद के मानसून सत्र के दौरान अन्य विकास कार्यो की घोषणाऐं कर बिहार को और तोहफों से नवाज सकती है। ●

डिजिटल इंडिया
उँगली में इन्फॉरमेशन

'डिजिटल इंडिया' को हमारे किसान भाई इस तरह समझ सकते हैं कि उन्हें उनकी खेतीबाड़ी और मौसम से संबंधित जानकारियां उनके मोबाइल पर यथासमय मिल जाया करेंगी। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस योजना के क्रियान्वयन से होने वाले भावी बदलावों को बहुत साधारण मिसाल से समझाते हुए कहा कि पुराने समय में जैसे बच्चा पढ़ने–लिखने की नकल करने के लिए अपने घर के किसी बुजुर्ग का चश्मा लगाकर किताब खोलकर बैठ जाया करता था अब उसी तरह वह मोबाइल का इस्तेमाल करेगा।

■ **महेन्द्र सिंह बोरा**

डिजिटल इंडिया अभियान का शुभारंभ करते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कहा कि भारत के आज तक पिछड़े रहने का कारण यही रहा है कि हम शोध और आविष्कार के मामले में निरंतर पिछड़ते चले गये। श्री मोदी ने राजधानी दिल्ली में अपने प्रमुख मंत्रिमंडलीय सहयोगियों, देश-विदेश के नामचीन उद्योगपतियों और सूचना प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों की उपस्थिति में 'डिजिटल इंडिया' सप्ताह के आयोजन की शुरुआत करते हुए आगे कहा कि देश को ई-गवर्नेंस से एम-गवर्नेंस की दिशा में अग्रसर होना है। उन्होंने कहा कि पाश्चात्य देश जब औद्योगिक क्रांति की ओर बढ़ रहे थे, तब भारत अंग्रेजों की सरपरस्ती में बिखरा हुआ था। उन्होंने आगाह किया कि यदि आज हम डिजिटल क्रांति में पिछड़ गये तो यह सवा अरब की आबादी वाले विशाल देश के लिये बड़ी बिडंबना होगी।

श्री मोदी ने कहा कि 'डिजिटल सशक्तीकरण' के माध्यम से देशव्यापी स्तर पर सुशासन अभियान को रफ्तार दी जायेगी। इस अभियान से एक ऐसे मानव का निर्माण किया जा सकेगा जो सूचना प्रौद्योगिकी तकनीकियों से लैस होगा। साइबर सुरक्षा के परिप्रेक्ष्य में अपनी चिंताओं को व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि आज पूरा विश्व 'रक्तहीन' विश्वयुद्ध के साये में जी रहा है। श्री मोदी ने कहा कि हमें इस साइबर युद्ध की चुनौतियों से निपटने के तरीके निकालने होंगे।

डिजिटल क्रांति के अभियान की शुरुआत के मौके पर मौजूद विभिन्न बड़ी कंपनियों के

प्रतिनिधियों और स्वामियों ने 4.5 लाख करोड़ रुपये के निवेश की घोषणा की।

श्री मोदी ने उद्घाटन अवसर पर डिजिटल इंडिया योजना को भावी भ्रष्टाचार मुक्त और सुशासित भारत के लिये एक महत्वपूर्ण कदम बताया। उन्होंने कहा कि इस योजना के क्रियान्वयन से नागरिकों को अपनी दैनंदिन समस्याओं और कार्यों के लिये कार्यालयों और अधिकारियों के चक्कर नहीं लगाने होंगे। उन्होंने कहा कि उनका सपना एक ऐसा 'डिजिटल इंडिया' है जहां सरकारी सेवाएं और सूचनाएं लोगों को उनके मोबाइल पर आसानी से हर वक्त उपलब्ध रहेंगी। इस अवसर पर उन्होंने सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में विकास की अपार संभावनाओं को भी रेखांकित किया। उन्होंने इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं के विनिर्माण को प्रोत्साहित करने का भी वादा किया। इस संदर्भ में उन्होंने नई कंपनियों का विशेष जिक्र किया। गौरतलब है कि वर्तमान में भारत पेट्रोलियम के बाद इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों और वस्तुओं का भारी पैमाने पर आयात करता है।

रक्तहीन साइबर युद्ध की विश्वव्यापी आशंकाओं के मद्देनजर श्री मोदी ने भारत की भूमिका को काफी महत्वपूर्ण ठहराया। उन्होंने कहा कि आज विश्व इससे भयभीत है। भारत के पास अपार प्रतिभा है। उन्होंने प्रश्न किया कि क्या भारत इस वैश्विक समस्या के नूतन और विश्वसनीय समाधान प्रस्तुत करते हुए दुनिया को एक साइबर कवच उपलब्ध करा सकता है। आखिर हमारे पास इस प्रकार का विश्वास क्यों नहीं होना चाहिए? उन्होंने कहा कि विश्व शांति के लिये आज दुनिया भारत की ओर देख रहा है और हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि मानवता आपस में मिल-जुलकर शांति से रहे।

श्री मोदी ने साइबर असुरक्षाओं को मिसाल के साथ स्पष्ट करते हुए कहा कि कोई भी साधारण शिक्षित परंतु कम्प्यूटर और इंटरनेट फ्रेंडली व्यक्ति दुनिया के किसी भी कोने में बैठकर एक माउस के क्लिक मात्र से आपके बैंक खाते को साफ कर सकता है।

साइबर प्रगति की अच्छाइयों को रेखांकित करते हुए श्री मोदी ने हालिया कोयला ब्लॉकों की नीलामी का जिक्र किया। उन्होंने इसे प्रौद्योगिकी के सकारात्मक इस्तेमाल का सशक्त उदाहरण बताया। श्री मोदी ने कहा कि इन ब्लॉकों के आवंटन में सरकार के खिलाफ कोई आरोप नहीं लगा क्योंकि यह सब पारदर्शी तरीके से किया गया था।

इस अवसर पर श्री मोदी ने प्रख्यात समाज सुधारक, विचारक व चिंतक मार्टिन लूथर किंग के ऐतिहासिक भाषण को स्मरण करते हुए कहा कि डिजिटल इंडिया का लक्ष्य राजकाज को जन सुलभ बनाने के साथ-साथ सोशल मीडिया के जरिये लोगों से सकारात्मकता के साथ जुड़ना है।

इस अवसर पर प्रधानमंत्री के प्रमुख मंत्रिमंडलीय सहयोगी अरुण जेटली, रविशंकर प्रसाद, जेपी नड्डा, थावर चंद्र गहलोत, जुआल ओराम और निर्मला सीतारमन सहित रिलायंस इंडस्ट्रीज के चेयरमैन मुकेश अंबानी, एडीएजी के चेयरमैन अनिल अंबानी, भारती इंटरप्राइजेज के चेयरमैन सुनील मित्तल, टाटा समूह के चेयरमैन सायरस मिस्त्री, आदित्य बिड़ला और विप्रो के सर्वेसर्वा अजीम प्रेमजी, यूरोपीय कंपनी एयरबस के रक्षा व अंतरिक्ष इकाई के पीईओ बर्नहार्ड गेरवेर्ट, ताइवानी कंपनी डेल्टा इलेक्ट्रॉनिक्स के सीईओ पिंगपांग भी मौजूद रहे। सभी मौजूद उद्योगपत्तियों ने डिजिटल इंडिया योजना का स्वागत करते हुए इसमें भारी-भरकम राशि निवेश करने की घोषणा की।

क्या है 'डिजिटल इंडिया'

सूचना प्रौद्योगिकी के आधुनिक युग में जबकि विश्व तेज रफ्तार के साथ साइबर क्रांति की ओर बढ़ रहा है, राजग सरकार ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अगुआई में सशक्त भावी भारत के निर्माण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये 'डिजिटल इंडिया' अभियान का राजधानी दिल्ली से जोर-शोर के साथ शुभारंभ किया। इस अभियान की शुरुआत एक जुलाई को प्रधानमंत्री श्री मोदी द्वारा 'डिजिटल इंडिया' सप्ताह के आयोजन के साथ की गयी। आइए जानते हैं इस स्वप्निल योजना के बारे में कि आखिर भविष्य का भारत यानी 'डिजिटल इंडिया' है क्या?

गौरतलब है कि भारतीय जनता पार्टी ने भ्रष्टाचार मुक्त पारदर्शी सुशासन प्रदान करने के वादे पर चुनाव लड़ा था और आज वह अपने सहयोगियों के साथ केंद्र सहित अनेक सूबों में शासन की बागडोर संभाले हुए है। यह भी ध्यातव्य है कि विगत वर्ष 27 सितंबर को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपनी अमेरिका यात्रा के दौरान मैडिसन स्क्वायर से अपने उद्बोधन में 'मेक इन इंडिया' की बात बहुत दमदार तरीके से पेश की। इसी सिलसिले को आगे बढ़ाते हुए 'डिजिटल इंडिया' नाम से एक और योजना प्रस्तुत की गयी है। इसे केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री श्री मोदी की अगुआई में एक अभियान की तरह पेश किया। यह योजना अपनी अवधारणा के तहत भारत की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्थाओं को अनेक आयामों पर स्पर्श करती है।

'डिजिटल इंडिया' को हमारे किसान भाई इस तरह समझ सकते हैं कि उन्हें उनकी

डिजिटल इंडिया के मंसूबे

- **ब्रॉडबैंड हाइवे**
  दिसंबर 2016 तक 250,000 पंचायतों को ब्रॉडबैंड से जोड़ना
- **यूनिवर्सल एक्सेस टू फोन**
  2018 तक 42,000 गांवों को मोबाइल नेटवर्क से जोड़ना
- **सार्वजनिक इंटरनेट एक्सेस प्रोग्राम**
  2,50,000 गांवों को इंटरनेट से जोड़ना, 1,50,000 पोस्ट ऑफिसों को मल्टी सर्विस सेंटर बनाना
- **ई-गवर्नेंस**
  सरकारी कामकाज, योजनाओं, सेवाओं और सूचनाओं को इलेक्ट्रॉनिक करना
- **ई-क्रांति**
  शिक्षा, तकनीक, स्वास्थ्य, कृषि, सुरक्षा, आर्थिक और न्यायिक सेवाओं को इंटरनेट से जोड़ना
- **इंफॉर्मेशन फॉर ऑल**
  सरकार व जनता के बीच सीधा संवाद, सूचनाओं और दस्तावेजों को ऑनलाइन करना
- **इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादन**
  सेटटॉप बॉक्स, वीसेट्स, मोबाइल, स्मार्ट कार्ड, माइक्रो एटीएम, मेडिकल इलेक्ट्रॉनिक्स का निर्माण
- **आईटी फॉर जॉब्स**
  छोटे शहरों के छात्रों को आईटी सेक्टर के लिए तैयार करना
- **अर्ली हार्वेस्ट प्रोग्राम**
  सभी विश्वविद्यालयों को वाई-फाई से लैस करना, सरकारी कर्मचारियों को सुरक्षित ईमेल से जोड़ना

खेतीबाड़ी और मौसम से संबंधित जानकारियां उनके मोबाइल पर यथासमय मिल जाया करेंगी। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस योजना के क्रियान्वयन से होने वाले भावी बदलावों को बहुत साधारण मिसाल से समझाते हुए कहा कि पुराने समय में जैसे बच्चा पढ़ने-लिखने की नकल करने के लिए अपने घर के किसी बुजुर्ग का चश्मा लगाकर किताब खोलकर बैठ जाया करता था अब उसी तरह वह मोबाइल का इस्तेमाल करेगा।

इस योजना के बारे में विस्तार से जानकारी देते हुए केंद्रीय सूचना प्रौद्योगिकी व दूरसंचार मंत्री रविशंकर प्रसाद ने बताया कि यह योजना 'गेम चेंजर' साबित होगी। इसके क्रियान्वयन से देश की तस्वीर बदल सकती है। इसके तहत पोस्ट ऑफिसों को कॉमन डिजिटल सर्विस सेंटर के रूप में विकसित किया जायेगा। छोटे शहरों में भी बीपीओ खोले जायेंगे। उन्होंने कहा कि सरकार प्रत्येक नागरिक के लिये डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर तैयार करना चाहती है। सरकारी सेवाओं को आसानी से मुहैया कराना सरकार का मुख्य मकसद है।

इस योजना का लक्ष्य कागजी कार्रवाइयों को कम करते हुए सभी सरकारी सेवाओं को आम आदमी तक डिजिटल अर्थात् इलेक्ट्रॉनिकली रूप से सीधे व सुगम तरीके से पहुंचाना है। डिजिटल विशेषज्ञों का कहना है कि भारत सरकार चाहती है कि तमाम सरकारी विभाग और देश की जनता परस्पर डिजिटल यानि इलेक्ट्रॉनिक रूप से जुड़ जायें ताकि वे सभी प्रकार की सरकारी सेवाओं से अधिकतम लाभ उठा सकें तथा देश में सुशासन सुनिश्चित किया जा सके।

डिजिटल इंडिया पूरे देश में इलेक्ट्रॉनिक गवर्नेंस और यूनिवर्सल फोन सुविधा प्रदान करने हेतु व्यापक स्तर पर तकनीकी विस्तार का काम करेगा। एक ऐसी प्रौद्योगिकी का निर्माण किया जायेगा जो देश में डिजिटल डिवाइड अर्थात इंटरनेट असमानता की खाई को भर सके।

इस योजना से भविष्य में लोग शिक्षा, स्वास्थ्य जैसी सुविधाओं को भी अपने मोबाइल और कम्प्यूटर के जरिये प्राप्त कर सकेंगे। मोबाइल नंबर की नेशनल पोर्टेबिलिटी अर्थात अब देश में उपभोक्ता कहीं भी हो उसको अपना मोबाइल नंबर बदलने की आवश्यकता नहीं है, इस सेवा को डिजिटल इंडिया के उदाहरण के रूप में समझा जा सकता है। डिजिटल इंडिया सप्ताह के आयोजन का मुख्य उद्देश्य इस योजना हेतु अधिकाधिक वित्तीय संसाधन जुटाना भी था। इस योजना को साकार करने के लिये 4.5 लाख करोड़ रुपयों से ज्यादा राशि निवेश होगी। अनुमान लगाया जा रहा है कि 18 लाख से ज्यादा रोजगार अवसरों का सृजन किया जा सकेगा।

इस योजना के उद्घाटन अवसर पर रिलायंस इंडस्ट्रीज के सर्वेसर्वा मुकेश अंबानी ने आने वाले पांच सालों में ढ़ाई लाख करोड़ रुपये निवेश करने की घोषणा की, जबकि उनके अनुज अनिल अंबानी ने 10,000 करोड़ रुपये निवेश करने का वादा किया। इस मौके पर कुमार मंगलम बिड़ला ने सात अरब डॉलर के निवेश की घोषणा की और सुनील मित्तल ने एक लाख करोड़ रुपये निवेश करने की प्रतिबद्धता जतायी। ताइवानी कंपनी डेल्टा इलेक्ट्रॉनिक्स के सीईओ पिंगपांग ने भी इस योजना के लिये उत्साह दिखाते हुए 50 करोड़ डॉलर के वित्तीय निवेश का वादा किया। डिजिटल इंडिया सप्ताह के उद्घाटन अवसर पर प्रधानमंत्री श्री मोदी द्वारा इस योजना का लोगो भी जारी किया गया।

अलमारी सरकार की और चाबी आपकी

अब आप सरकारी वेबसाइट http:digitallocker.gov.in पर एक नए डिजिलॉकर के मालिक बन सकते हैं। यह सरकारी वेबसाइट है। डिजिलॉकर एकाउंट खोलने के लिए आपके पास आधार कार्ड नंबर होना आवश्यक है। इस लॉकर में आप अपने सारे दस्तावेज सेव कर सकते हैं। अपनी निजी जानकारी के दस्तावेज और फोटो वहां रख सकते हैं। अगर किसी सरकारी दफ्तर या बाबू को आपकी कोई फाइल चाहिए तो आप उसे उनके साथ ऑनलाइन शेयर भी कर सकते हैं। डिजिलॉकर पूरी तरह आपकी दुनिया होगी। डिजिलॉकर का मतलब यह है कि सरकारी वेबसाइट पर आपकी निजी जानकारी और फाइलों को सुरक्षित रखने के लिए आपके पास एक अलमारी होगी और उसकी चाबी सिर्फ आपके पास होगी। यह डिजिटल इंडिया का एक अहम भाग है।

डिजिटल इंडिया के पक्ष और विपक्ष में तर्क

- डिजिटल इंडिया का बजट एक लाख करोड़ रुपये का है। यह सरकार का बड़ा प्रोजेक्ट है और मेक इन इंडिया एवं स्किल्ड इंडिया से जुड़ा है।
- पूरी तरह से लागू होने के बाद पांच करोड़ नौकरियों के अवसर पैदा होंगे।
- डिजिटल इंडिया मोदी सरकार की दो बड़ी परियोजनाओं मेक इन इंडिया और स्किल्ड इंडिया का हिस्सा है।
- इससे सरकारी दफ्तर पेपर-मुक्त हो जाएंगे। यह एक पेपर-मुक्त दुनिया होगी, जहां सारे काम ऑनलाइन किए जा सकेंगे।
- इससे सरकारी दफ्तरों की क्षमता बढ़ेगी, लोगों का काम आसान होगा, पैसा और समय भी बचेगा।
- डिजिटल इंडिया गांव-गांव तक जाएगा। सरकार इस मुहिम को हर गांव तक ले जाना चाहती है। इसके तहत शुरू में कुछ गांवों में से एक में सरकारी कंप्यूटर हब होंगा, जहां जाकर ग्रामीण उस कंप्यूटर पर लॉगइन कर सकते हैं।
- इससे देश में डिजिटल विभाजन बढ़ने का खतरा है। उदाहरण के तौर पर डिजिलॉकर का इस्तेमाल वही नागरिक कर सकेंगे जिन्हें कंप्यूटर की सुविधा उपलब्ध होगी।
- इसे चलाने के लिए बिजली की जरूरत होगी। बिजली की कमी की वजह से गांवों के करोड़ों लोग इससे नहीं जुड़ पाएंगे।
- जिसके पास मोबाइल फोन होगा, वही इसका इस्तेमाल कर सकेगा क्योंकि वन टाइम पासवर्ड (ओटीपी) आपके मोबाइल पर ही आएगा।
- इंटरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ इंडिया के मुताबिक पिछले साल दिसंबर तक भारत की 130 करोड़ आबादी में से 17.3 करोड़ लोग मोबाइल फोन के मालिक थे। यह संख्या इस साल जून तक 21.3 करोड़ होने की उम्मीद थी।
- भारत में पिछले साल तक साक्षरता दर 74 फीसद से थोड़ा ऊपर थी। इसका मतलब कुछ सालों तक आबादी का एक बड़ा हिस्सा डिजिटल इंडिया से नहीं जुड़ सकेगा।

हकीकत देश की

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने राजधानी स्थित तालकटोरा स्टेडियम में अपने मंत्रिमंडलीय सहयोगियों और बड़े औद्योगिक घरानों के प्रमुखों की मौजूदगी में अपनी स्वप्निल योजना 'डिजिटल इंडिया' का उद्घाटन किया। अपने 27 मिनट के भाषण में उन्होंने भविष्य के भारत की जो तस्वीर पेश की वह सुनने में भले ही सुखद लगती हो परंतु वास्तविकता इसके निकट भी नहीं फटकती है।

बकौल श्री मोदी 2020 तक भारत तकनीकी क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो जायेगा और इस योजना से भविष्य में करीब एक करोड़ लोगों को रोजगार मिलेगा। यह सच है कि आज मोबाइल की गिरती हुई कीमतों ने भारत को स्मार्ट फोन का विश्व में एक बहुत बड़ा बाजार बना दिया है।

रीपैकेजिंग कर रही है सरकार

डिजिटल इंडिया की शुरुआत राजीव गांधी के समय में हुई थी। उन्होंने 1980 के दशक में राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र (नेशनल इन्फार्मेटिक्स सेंटर) बनाया था। तब से हम इस क्षेत्र में बहुत सारे लोगों को प्रशिक्षित कर रहे हैं। सिस्टम विकसित कर रहे हैं। पिछले 30 सालों में हमने बहुत कुछ सीखा है। बहुत सी नई-नई चीजें की हैं। आज जब सरकार कह रही है कि डिजिटल इंडिया बन रहा है तो वह बस रीपैकेजिंग कर रही है। पिछले कई सालों में जो बन रहा है सरकार उसी काम को आगे बढ़ा रही है, जिसके लिए उसे बधाई देनी चाहिए।

साथ में यह भी समझना होगा कि केवल एक नई वेबसाइट बनाने से डिजिटल इंडिया नहीं बन सकता। कॉल ड्राप और कनेक्टिविटी जैसी बुनियादी समस्याओं से जूझ रहे भारत में कैसे संभव है डिजिटल इंडिया?

श्री मोदी चाहते हैं कि तकनीक के जरिये वह इस बाजार को शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्र के लिये इस्तेमाल करें। उनकी इस सद्इच्छा का स्वागत किया जाना चाहिये। परंतु 70 प्रतिशत आबादी आज भी जहां अविकसित गांवों, कस्बों, झुग्गी बस्तियों में रहती हो, जहां का मुख्य व्यवसाय आज भी खेतीबाड़ी हो, वहां 'डिजिटल इंडिया' एक सपना ही नहीं बल्कि चुनौती भी लगता है। गौरतलब है कि विश्व में इंटरनेट स्पीड के मामले में भारत का 115 वां स्थान है। अकामाई टेक्नालॉजी के हालिया सर्वेक्षण से यह बात सामने आई है कि भारत इंटरनेट स्पीड के मामले में काफी पीछे है। भारत में इंटरनेट की स्पीड इस समय दो एमबीपीएस के आसपास है। जबकि साउथ कोरिया 25.3, हांगकांग 16.3, जापान 15.0, सिंगापुर 12.2 और अमेरिका 11.5 एमबीपीएस डाउनलोडिंग स्पीड के साथ भारत से कहीं ऊपर हैं। साथ ही भारत में काफी कम लोग इंटरनेट सुविधा की पहुंच में हैं। सवा अरब वाले देश में केवल 24.8 करोड़ लोग इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं। जबकि दक्षिण कोरिया, जापान, चीन, अमेरिका और पाश्चात्य देश इस मामले में हमसे कहीं ऊपर हैं। कोरिया में 98 प्रतिशत लोग इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं।

भारत में केवल 4 प्रतिशत लोग ही 1000 रुपये से ज्यादा इंटरनेट आदि पर प्रतिमाह व्यय करते हैं। भारत में हर तरह के इंटरनेट प्लान की औसत कीमत 500 रुपये के आसपास है। भारत के लगभग 65 फीसदी लोग सौ से पांच सौ रुपयों के बीच इंटरनेट पर व्यय करते हैं। सूचना प्रौद्योगिकी विशेषज्ञों का यह भी कहना है कि मुफ्त वाई-फाई योजना कमजोर बेंडविथ के चलते ज्यादा कारगार नहीं होगी। सबसे अहम् सवाल यह है कि किसी भी प्रकार के डिजिटल कार्य निष्पादन के लिये बिजली पहली जरूरत होती है। परंतु भारत के 40 करोड़ लोग आज भी पर्याप्त विद्युत आपूर्ति से काफी दूर हैं। आज भी भारत के हजारों गांव विद्युतीकरण के लिये तरस रहे हैं। गौरतलब है कि साल 2012 में 30 व 31 जुलाई को समूचे उत्तर भारत को विद्युत आपूर्ति करने वाला ग्रिड फेल हो गया था। पूरा उत्तर भारत लगभग 48 घंटे तक बिना बिजली के रहा। इसके अलावा तकनीकी तौर पर भी हमारा मुल्क साइबर सूचनाओं की सुरक्षा के मामले में अभी काफी कमजोर है। प्रधानमंत्री ने इस योजना के मौके पर स्वयं यह स्वीकार किया कि विश्व साइबर युद्ध के भय तले जी रहा है। साइबर युद्ध का मतलब है कि डिजिटल सूचनाओं को चोरना या फिर सूचना तंत्र पर आक्रमण करना। विश्व में अनेक देशों में हैकिंग की वारदातें आये दिन होते रहती हैं। साल 2009 में लगभग 18 मिनट तक इंटरनेट की सूचनाएं वाया चीन होकर आने-जाने लगी थीं। गौरतलब है कि अभी इंटरनेट सूचनाएं वाया अमेरिका आती-जाती हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि हमारे पास अपनी सूचनाओं को डिजिटली सुरक्षित रखने का तंत्र अभी तक बहुत शैशव अवस्था में ही है। कई बार अनेक मोबाइल कंपनियों पर विभिन्न तरीके से अपने मोबाइल उपकरणों के जरिये अवैधानिक रुपये से उपभोक्ताओं की सूचनाओं को हथियाने और चुराने के आरोप लग चुके हैं।

यह तो थी तकनीकी कमजोरियों की बात। इस योजना पर जो भारी भरकम आर्थिक निवेश होगा। वह भी देश के अन्य निवेशों में कटौती से प्राप्त होगा। सामाजिक न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि में पहले से ही काफी कम निवेश किया जा रहा है। ऐसे में यदि इन क्षेत्रों में सरकार कटौती करती है तो हालात और बुरे होंगे।

यह सही है कि सरकार सुशासन के लिये राजकाज को डिजिटली संचालित करना चाहती है परंतु इसके लिये पहले एक मजबूत ढांचा विकसित करने की जरूरत है।

हमारे देश में भी जो लोग इंटरनेट और मोबाइल आदि की पहुंच में हैं, वे लोग इन सुविधाओं का उपयोग कामकाज के लिये कम और समय नष्ट करने के लिये ज्यादा करते हैं। अनेक सोशल साइट्स पर इस तरह की सामग्रियां और लोग सक्रिय दिखायी देंगे जो कि एक सभ्य और शिष्ट नागरिक समाज के लिये अवांछित हैं। दरअसल हमारे देश में डिजिटल तकनीक के इस्तेमाल की मानसिकता को भी बदलने की बहुत आवश्यकता है। हाल ही में केंद्रीय मंत्री स्मृति ईरानी इसी प्रकार की अवांछित मानसिकता का शिकार होते-होते बची थीं। आज हमने मोबाइल उपकरणों के चलते एक ऐसी पीढ़ी विकसित कर दी है जो अपने आसपास के परिवेश से और अपनों के दु:ख-दर्द तथा जरूरतों से गाफिल है। श्री मोदी शायद इस तथ्य से

डिजिटल इंडिया पूरे देश में इलेक्ट्रॉनिक गवर्नेंस और यूनिवर्सल फोन सुविधा प्रदान करने हेतु व्यापक स्तर पर तकनीकी विस्तार का काम करेगा। एक ऐसी प्रौद्योगिकी का निर्माण किया जायेगा जो देश में डिजिटल डिवाइड अर्थात इंटरनेट असमानता की खाई को भर सके।

वाकिफ नहीं हैं कि भारत के लोग तकनीक का उपयोग कम और दुरुपयोग ज्यादा करते हैं। वे स्वयं यह स्वीकार कर चुके हैं कि सोशल साइट्स पर सूचनाओं के आदान-प्रदान और समालोचना से ज्यादा आलोचनाएं की जाती हैं।

प्रत्येक नागरिक को एक विकसित देश और सुखद जीवन की आकांक्षा होती है। परंतु जहां सत्ता का शीर्ष प्रतिष्ठान और उससे जुड़े लोग ही आकंठ भ्रष्टाचार में लिप्त हों, जहां शिक्षा बंटी हुई हो, समाज बंटा हुआ हो, मानव सुविधाएं विभाजित हों, वहां पर 'डिजिटल इंडिया' का सपना बेमानी सा लगता है। कहीं ऐसा न हो कि यह योजना भविष्य में दिल बहलाने के लिये गालिब ख्याल तो अच्छा है कि तर्ज पर चली जाये।

सबसे पहले देश में शैक्षणिक और सामाजिक समानता की आवश्यकता है। जिस दिन देश का प्रत्येक नागरिक शिक्षित और संस्कारित होगा उस दिन भारत स्वत: 'डिजिटलाइज' हो जायेगा। इस लिये यह आवश्यक है कि सरकार पहले वह करे जो आवश्यक है। फिर वह करे जो संभव है और एक दिन वह अपने आप हो जायेगा जो आज असंभव है। ●

सेहत पर एक और खतरा

पर्यावरण और वन मंत्रालय ने 2010 में बीटी बैंगन पर प्रतिबंध लगाया था। अगर यह नहीं किया जाता तो यह आनुवंशिक रूप से परिवर्तित पहली खाद्य फसल होती। अब पांच साल बाद अनुमति देने वाली केंद्रीय एजेंसी आनुवंशिक अभियांत्रिकी मूल्यांकन समिति यानी जीईएसी दिल्ली विश्वविद्यालय की जीएम सरसों की एक किस्म डीएमएच–11 को हरी झंडी देने की तैयारी कर रही है। दावा है कि यह जीएम सरसों 20–25 फीसदी अधिक पैदावार देती है और सरसों तेल की गुणवत्ता को भी बढ़ाती है। यह समय इन दावों की सच्चाई की परीक्षा का है।

देविंदर शर्मा

जब जाड़े के दिन आते हैं तो मैं सरसों के साग के लिए तरसने लगता हूं। जहां तक मुझे याद है जब मुझे पहली नौकरी मिली थी तो मेरी मां मुझे इतना साग भेज देती थीं जो एक सप्ताह तक चल जाए। मैं हर वक्त या कम से कम दिन में एक बार साग के साथ भोजन कर सकता था। यह ऐसी आदत थी जो बचपन से ही बनी रही, लेकिन मैं अपने खान-पान के स्वाद और इच्छा की बात इसलिए कर रहा हूं क्योंकि मुझे लगता है मुझे जल्द ही अपने इस पसंदीदा भोजन को भूलना पड़ेगा। बताया जा रहा है कि पर्यावरण और वन मंत्रालय आनुवंशिक रूप से परिवर्तित यानी जीएम सरसों के व्यावसायिक उत्पादन की अनुमति देने जा रहा है। मुझे नहीं लगता कि अब मैं कोई जोखिम ले पाऊंगा। मैं जानता हूं कि मक्के की रोटी और संरसों के साग का लुत्फ लेने वाले लाखों उत्तर भारतीय लोग सरकार के इस कदम से बहुत निराश होंगे। आखिरकार पारंपरिक रूप से रोज की थाली का हिस्सा रही एक खाद्य फसल को आनुवंशिक रूप से परिवर्तित करने की क्या वजह हो सकती हैं? वास्तव में जीएम सरसों को आम सरसों से अलग करने का कोई तरीका नहीं है कि मैं निश्चित हो सकूं कि जो मैं खा रहा हूं वह आनुवंशिक तौर पर परिवर्तित नहीं है।

पर्यावरण और वन मंत्रालय ने 2010 में बीटी बैंगन पर प्रतिबंध लगाया था। अगर यह नहीं किया जाता तो यह आनुवंशिक रूप से परिवर्तित पहली खाद्य फसल होती। अब पांच साल बाद अनुमति देने वाली केंद्रीय एजेंसी आनुवंशिक अभियांत्रिकी मूल्यांकन समिति यानी जीईएसी दिल्ली विश्वविद्यालय की जीएम सरसों की एक किस्म डीएमएच-11 को हरी झंडी देने की तैयारी कर रही है। दावा है कि यह जीएम सरसों 20-25 फीसदी अधिक पैदावार देती है और सरसों तेल की गुणवत्ता को भी बढ़ाती है। यह समय इन दावों की सच्चाई की परीक्षा का है। इस संदर्भ में सबसे पहले यह समझने की जरूरत है कि जब बीटी बैंगन की बात की जा रही थी तब तर्क था कि बैंगन की फसल एक घातक कीड़े की वजह से नष्ट हो रही है,जो इसके फल और डंठल को खा जाता है। इससे किसानों को बड़ा नुकसान झेलना पड़ता है, लेकिन पिछले पांच साल में हमने देश के किसी हिस्से में बैंगन उगाने वाले किसानों द्वारा ऐसे किसी संकट के बारे में शायद ही कभी सुना हो। जो एकमात्र समस्या है भी, वह अधिक उत्पादन की है जिससे कीमतें गिरती हैं। रासायनिक खाद के मुद्दे पर हम बाद में आएंगे, पहले इस दावे की ओर देखें कि जीएम सरसों से आयात में कमी आएगी या नहीं?

जीएम सरसों को विकसित करने वाले कुछ वैज्ञानिकों को मैंने यह कहते सुना है कि भारत सालाना 60 हजार करोड़ रुपये का खाद्य तेल आयात करता है इसलिए जीएम सरसों के बढ़े उत्पादन से आयातित तेल कम हो जाएगा। जो वस्तुस्थिति नहीं जानते उनके लिए यह लाभप्रद सुझाव है। यह सच है कि भारत सालाना 60 हजार करोड़ रुपये का खाद्य तेल आयात करता है, लेकिन इसकी वजह तकनीक की कमी या अधिक उत्पादन न कर पाने की समस्या अथवा पिछड़ापन नहीं है। इसका सामान्य सा कारण है कि हमने आयात शुल्क को 300 प्रतिशत घटाकर लगभग शून्य करने की अनुमति दे रखी है। इस वजह से सस्ते आयात की बाढ़ है। सरसों समेत तमाम तिलहनी फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए 1985 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने तिलहन टेक्नोलॉजी मिशन की शुरुआत की थी ताकि आयात घटाया जा सके। 1985 में भारत लगभग 15 हजार करोड़ का खाद्य तेल आयात कर रहा था, जो हमारी घरेलू जरूरत का लगभग 50 प्रतिशत था। पेट्रोल और उर्वरक के बाद यह तीसरा सबसे बड़ा आयात बिल था। राजीव गांधी इसे कम करना चाहते थे। परिणामस्वरूप तिलहन मिशन की शुरुआत के दस साल बाद 1994-95 में भारत खाद्य तेल के मामले में लगभग आत्मनिर्भर हो गया और सिर्फ तीन प्रतिशत तेल का आयात हुआ। आखिर अब फिर से आयात बिल बढ़कर 60 हजार करोड़ रुपये कैसे हो गया? दरअसल बाद की सरकारों ने डब्ल्यूटीओ के निर्देशों पर अत्यधिक उदारीकरण की नीति के चलते आयात शुल्क घटाने शुरू कर दिए। डब्ल्यूटीओ नियमों के अनुसार, भारत 300 प्रतिशत आयात शुल्क लगा सकता है, लेकिन पता नहीं किन कारणों से भारत का आयात शुल्क लगभग शून्य तक ला दिया गया है। इस तरह आयात शुल्क में जबरन कटौती के कारण भारत में खाद्य तेल का आयात बढ़ते-बढ़ते आज 60 हजार करोड़ रुपये

से अधिक हो गया है। परणिामस्वरूप किसानों ने तिलहन बोना बंद कर दिया। इसलिए यह कहना बिल्कुल गलत है कि हमारे खाद्य तेल का आयात इसलिए बढ़ा है कि हम पर्याप्त घरेलू तिलहन नहीं पैदा करते।

सरसों भारत में पैदा की जाने वाली कई तिलहनी फसलों में से एक है। पिछले वर्षों में इसकी उत्पादकता और उत्पादन उछाल पर रहा है। 2010-11 में 81.8 लाख टन रिकॉर्ड सरसों का उत्पादन हुआ है। 1990-91 में इसका उत्पादन 9.4 क्विंटल प्रति हेक्टेयर था, जबकि 2013-14 में औसत उत्पादन बढ़कर प्रति हेक्टेयर 12.62 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हो गया। सरसों का उत्पादन और बढ़ सकता है अगर किसानों को लाभकारी कीमत मिले और हर साल उत्पादन को खरीदने वाली मंडी की उचित आधारभूत संरचना बनाई जाए। चूंकि राजस्थान, मध्य प्रदेश और हरियाणा में करीब 70 प्रतिशत सरसों की फसल उगाई जाती है इसलिए किसान जो समस्या झेलते हैं वह अधिक उत्पादन और खरीददारों की कमी की है। खास तौर से राजस्थान में केंद्रीय एजेंसी नेफेड को जरूरत से ज्यादा उत्पादन और गिरती कीमत के वक्त सरसों की खरीद के लिए कई बार आगे आना पड़ता है।

उपलब्ध खाद्य तेलों में सरसों का तेल स्वास्थ्य की दृष्टि से सबसे अच्छा है। इसमें संतृप्त फैटी एसिड की मात्रा सबसे कम होती है। सरसों के तेल में अपेक्षाकृत सस्ते बिनौले तेल और ताड़ के तेल की मिलावट एक बड़ी समस्या है। इसमें तीखापन लाने के लिए लाल मिर्च के घोल की भी मिलावट की जाती है। बाजार से मैगी नूडल्स को वापस लेने के बाद मुझे कोई कारण नहीं दिखता कि सरसों के तेल में होने वाली मिलावट के खिलाफ भी कड़ी कार्रवाई क्यों नहीं की जा सकती। वास्तव में सरसों तेल की गुणवत्ता में सुधार किसी आनुवंशिक परिवर्तन से नहीं, बल्कि प्रोसेसिंग उद्योग में सुधार से संभव है। कहा जा रहा है कि जीईएसी आने वाले महीनों में जीएम सरसों को पूरी तरह अनुमति देने पर सक्रियता से विचार कर रही है। जीएम सरसों को लाने का कोई औचित्य न होने के बावजूद इसे लाने की कवायद को लेकर मैं यह समझ पाने में विफल हूं कि मेरे जैसे लाखों उत्तर भारतीयों को अपने पसंदीदा सरसों के साग से आखिर क्यों महरूम किया जा रहा है। जीएम सरसों के आने से उसमें वह पुराना स्वाद नहीं रहेगा और यह स्वास्थ्य तथा पर्यावरण की दृष्टि से भी जोखिम भरा होगा। ऐसे में जीएम सरसों का साग खाने का जोखिम कौन उठाना चाहेगा।

-साभार: दैनिक जागरण

अधिक लाभ के लिए गौ केन्द्रित हो जैविक कृषि

■ **कैलाश चंद भार्गव**

'दूध गंगा' के अंतर्गत यदि गोबर व गोमूत्र प्रबंधन अनिवार्य कर दिया जाए, तो हमारे प्रदेश की कृषि में अनापेक्षित विकास होगा और गांव की आर्थिक दशा सुधरेगी तथा प्रदेश 'जैविक खेती' में देश का आदर्श राज्य होगा। भारतीय संस्कृति गाय को मातृरूपा तो मानती ही रही है, परंतु प्राचीन भारतीय अर्थ-व्यवस्था में 'गोधन' को श्रेष्ठतम धन भी माना गया है। श्रीकृष्ण का बालरूप गोपाल हमारी नस-नस में समाया है। आजीवन ही नहीं मृत्यु उपरांत भी गोदान का महत्त्व शास्त्रों में भरा पड़ा है। गउएं जहां रहती हैं, वहीं गांव है। हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था और गो केंद्रित कृषिकलापों का संक्षिप्त ब्यौरा ही इस लेख का मूल उद्देश्य है। एक सामान्य जाति की दोगली नस्ल की गाय प्रतिदिन लगभग 30 किलोग्राम गोबर देती है। इतना गोबर गैस प्लांट में डाल दिया जाए, तो तीन-चार सदस्यों के परिवार को इससे प्राप्त गैस से रसोई ईंधन का निर्वाह हो जाता है।

अब गोबर गैस प्लांट से निकलने वाले घोल को वर्मी कम्पोस्ट यूनिट में डाल दिया जाए और गोशाला से प्राप्त तथा अन्य कृषि उत्पाद अवशेषों को मिश्रित करते रहें तो साल भर में 36 फुट गुणा आठ फुट वर्मी कंपोस्ट यूनिट पूरी खाद बन जाता है, जिसका कुल भार 100 क्विंटल होगा। बाजार में वर्मी कम्पोस्ट खाद का भाव कम से कम छह रुपए किलोग्राम है। इस गणना के अनुरूप एक गाय से हमें वर्ष भर में 60 हजार रुपए की जैविक खाद प्राप्त हुई। यदि महीने का एक सिलेंडर भी बचा तो ये बचत 4500 रुपए वार्षिक हुई। माना कि उत्तराखंड की तर्ज पर पूरे हिमाचल में गोमूत्र क्रय हो पाना संभव नहीं, परंतु कृषि स्वास्थ्य में गोमूत्र की भूमिका अतुलनीय है। सीधी सी बात है कि हमारी कृषि के शत्रुकीट अपनी संतति के विकास व सुरक्षा की दृष्टि से वहीं अधिक प्रजनन करते हैं, जहां स्वाद, विषहीन, गंधहीन वनस्पति उपलब्ध हो।

यदि हम अपनी काश्त में स्वाद व गंध बिगाड़ दें, हल्का जैविक विष स्प्रे कर दें, तो ये शत्रु कीट पतंगे उस स्थान से इधर-उधर पलायन कर जाएंगे। लेखक ने ऐसा सफल प्रयोग किया है। यदि दस लीटर गोमूत्र में एक किलोग्राम बसूटी, एक किलोग्राम बणा, एक किलोग्राम नीम या दरेक या कड़वों की पत्तियां साग की तरह काटकर डाल दी जाएं और इस मिश्रण को दो-तीन मास तक सड़ने दिया जाए, और 15 लीटर पानी में इस सड़े मिश्रण को एक किलोग्राम मिलाकर छिड़काव हो तो न केवल कीट पतंगें पलायन करेंगे, बल्कि पौधे को गोमूत्र से प्राकृतिक यूरिया तथा अन्य खनिज भी उपलब्ध होंगे। यदि यह छिड़काव गर्मियों में साप्ताहिक सर्दियों में मासिक तौर पर नियमित होता रहे, तो आपने साल भर में 100 लीटर गोमूत्र का प्रयोग कर दस हजार रुपए की बचत कर ली और विषाक्त छिड़काव न कर आपने समाज के अमूल्य स्वास्थ्य की रक्षा कर ली। शेष गोमूत्र को सम भाग पानी मिला कर पौधों या पेड़ों को दिया जा सकता है।

इससे उत्पाद के गुण तथा मात्रा दोनों में भारी सकारात्मक परिवर्तन दिखेगा और किसी रासायनिक खाद की आवश्यकता अनुभव न होगी। इस प्रकार के नियोजित उपयोग के उपरांत गणना करें, तो आपकी गाय ने 60,000+4,500+20,000=84,500 वार्षिक परोक्ष आय आपको दे दी। गाय से मिलने वाले दूध तथा संतति संवर्द्धन की आय का लेखाजोखा आप पर छोड़ता हूं।

हिमाचल प्रदेश उद्यानिकी तथा वानिकी विश्वविद्यालय नौणी (सोलन) का एंटोमॉलोजी विभाग डॉ. उषा चौहान के नेतृत्व में नवजबाई टाटा मेमोरियल ट्रस्ट से मिले एक प्रोजेक्ट के अंतर्गत गोमूत्र के कृषि उपयोग पर शोध कार्य कर रहा है तथा लेखक इस विभाग का रिसोर्स पर्सन होने के नाते विश्वविद्यालय से निरंतर संपर्क में है। 'दूध गंगा' के अंतर्गत यदि गोबर व गोमूत्र प्रबंधन अनिवार्य कर दिया जाए, तो हमारे प्रदेश की कृषि में अपेक्षित विकास होगा और गांव की अर्थदशा सुधरेगी तथा प्रदेश 'जैविक खेती' में देश का आदर्श राज्य होगा।

-लेखक अर्की, जिला सोलन से पुरस्कृत प्रगतिशील कृषक हैं। उनका यह लेख दिव्य हिमाचल में प्रकाशित हुआ था

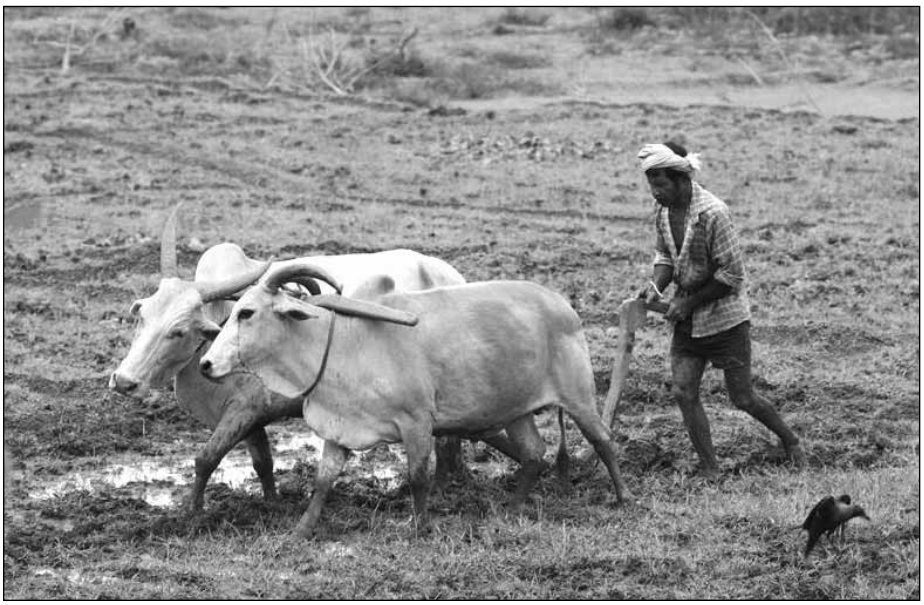

ऑकड़ों और प्रयोगों ने किया भारतीय कृषि का सत्यानाश

सत्यव्रत त्रिपाठी

भारत में ऋग्वैदिक काल से ही कृषि पारिवारिक उद्योग रहा है। लोगों को कृषि संबंधी जो अनुभव होते रहे हैं उन्हें वे अपने बच्चों को बताते रहे हैं और उनके अनुभव पीढ़ी दर पीढ़ी प्रचलित होते रहे। उन अनुभवों ने कालांतर में लोकोक्तियों और कहावतों का रूप धारण कर लिया जो विविध भाषाभाषियों के बीच किसी न किसी कृषि पंडित के नाम प्रचलित हैं और किसानों की जिह्वा पर बने हुए हैं। हिंदी भाषाभाषियों के बीच घाघ का नाम बहुत प्रसिद्ध है। उनके ये अनुभव आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधानों के परिप्रेक्ष्य में खरे उतरे हैं। लेकिन आधुनिकता की अंधी दौड़ में हम विदेशियों की तरफ आकृष्ट होने लगे ।

1960 के बाद उच्च उपज बीज हाइब्रिड का प्रयोग शुरू हुआ। इससे सिंचाई और रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ गया। इस कृषि में सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ने लगी। इसके साथ ही गेहूं और चावल के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई जिस कारण इसे 'हरित क्रांति' भी कहा गया। पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के किसानों ने कृषि के आधुनिक तरीकों का सबसे पहले प्रयोग किया। आधुनिक कृषि विधियों ने प्राकृतिक संसाधनों का अति दोहन किया है। अब इसके दुष्परिणाम भी दिखाई देने लगे हैं। उर्वरकों के अधिक प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता कम हो गई है। नलकूपों से सिंचाई के कारण भूमि जल के सतत निष्कासन से भूमिगत जलस्तर बहुत नीचे चला गया है। भारत में सिंचाई का मतलब खेती और कृषि गतिविधियों के प्रयोजन के लिए भारतीय नदियों, तालाबों, कुओं, नहरों और अन्य कृत्रिम परियोजनाओं से पानी की आपूर्ति करना होता है। भारत जैसे देश में खेती करने की 64 प्रतिशत भूमि मानसून पर निर्भर होती है। भारत में सिंचाई करने का आर्थिक महत्व है- उत्पादन में अस्थिरता को कम करना, कृषि उत्पादकता की उन्नति करना, मानसून पर निर्भरता को कम करना, खेती के अंतर्गत अधिक भूमि लाना, काम करने के अवसरों का सृजन करना, बिजली और परिवहन की सुविधा को बढ़ाना, बाढ़ और सूखे की रोकथाम को नियंत्रण मे करना।

आधे से भी कम लोग यानी सिर्फ साढ़े 45 प्रतिशत लोग ही कृषि पर निर्भर रह गये हैं। यह हालत कृषि के खोखलेपन को बताती है। सह कृषि के रुप में बागवानी, मत्स्य पालन, पशुपालन, कुक्कुट पालन, मधुमक्खी पालन तथा फूड प्रोसेसिंग आदि अनेक कार्य शामिल हैं जिनसे न सिर्फ पारम्परिक कृषि पर बोझ कम होता है बल्कि वे उत्पादों में भिन्नता लाते हैं और कृषि का विकल्प भी बनते हैं। अफसोस है कि इनमें से अधिकांश पदों पर कृषि विशेषज्ञ नहीं बल्कि भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी बैठे हुए हैं, जिन्हें खेतीबाड़ी का कोई ज्ञान ही नहीं है। कृषि आज भी देश की प्राथमिक आवश्यकता है और संसद में पेश ताजा ऑकड़ों के अनुसार देश के कुल 40 करोड़ 22 लाख श्रमिकों में लगभग 57 प्रतिशत लोग कृषि में ही समायोजित हैं! स्थिति यह है कि देश में इस वक्त कोई किसान आयोग ही नहीं है। कृषि को जब तक लाभकारी नहीं बनाया जाएगा और किसानों को उनकी कृषि योग्य जमीन पर खेती करने के बदले एक निश्चित आमदनी की गारन्टी नहीं दी जायेगी, जैसा कि अमेरिका सहित तमाम विकसित देशों में है, तब तक किसानों को खेती से बांधकर नहीं रखा जा सकता या खेती की तरफ नहीं मोड़ा जा सकता। खेती से होने वाली आमदनी को बढ़ाने के प्रयास इस तरह किये जाने चाहिए कि किसान धीरे-धीरे सरकारी अनुदान से मुक्त होकर खेती पर निर्भर रह सकें। भारतीय कृषि सिर्फ खाद्यान्न उत्पादन योजना भर नहीं बल्कि एक समृद्ध परम्परा रही है। इसे सामूहिक खेती के भरोसे भी नहीं छोड़ा जा सकता।

एक ऐसे समय में जब कृषि योग्य जमीन लगातार घट रही हो और उस पर निर्भर होने वालों की संख्या तेजी से बढ़ रही हो, यह जरुरी हो जाता है कि कृषि की ढांचागत व्यवस्था को नये सिरे से परिभाषित किया जाय। देश की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये हमें कृषि क्षेत्र में 5 प्रतिशत से अधिक विकास दर

यह कितना हास्यापद है कि हर जीवित प्राणी कृषि या सह–कृषि पर निर्भर है। फिर भी किसानों की हालत चिंताजनक है। किसान करोड़ों लोगों का पेट भरते हैं फिर भी हर जगह किसान को बेचारा कहा जाता है। क्या सरकारें किसान को अन्नदाता कहने या मुवावजा बांटने के अलावा भी कुछ करती हैं? क्यों नहीं किसान को हम फसल उत्पादक कहते जिसे अपने उत्पादन को बेचने के लिए किसी साहूकार का मुंह न ताकना पड़े!

की आवश्यकता है, जबकि अभी हम इसके आधी से भी पीछे हैं। ताजा आंकलन बताते हैं कि चालू वर्ष में यह स्थिति बेहतर हो सकती है। कृषि विशेषज्ञों का अनुमान है कि आने वाले 15 वर्षों में खाद्यान्न संकट और बढ़ सकता है जिसका मुकाबला करने के लिये कृषि क्षेत्र को सिर्फ पारम्परिक खेती के भरोसे ही नहीं छोड़ा जा सकता। इसमें समावेशी कृषि तथा दुग्ध, फल और मांस जैसे कृषि आधारित कुटीर उद्योगों को शामिल किया जाना आवश्यक हो गया है। चालू बजट से पूर्व आर्थिक समीक्षा रिपोर्ट में कृषि के बारे में चौंकाने वाले तथ्य पेश करते हुए बताया गया है कि दो दशक के भीतर कृषि योग्य जमीन में 28 लाख हैक्टेयर की कमी आ चुकी है। देश की आबादी के बड़े हिस्से की कृषि पर निर्भरता को देखते हुए यह तथ्य चिंताजनक हैं।

भारतीय कृषि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यहां विविधीकरण संभव है। यहां अगर छह प्रकार की ऋतुएं हैं तो दर्जनों प्रकार की मिट्टी भी है, जो प्राय: हर प्रकार की फसल के उत्पादन को यहां सुगम बनाती हैं। भारतीय उप महाद्वीप को छोड़कर विश्व में अन्यत्र यह संभव नहीं। बावजूद इसके भारतीय कृषि अभी बहुत कुछ पारम्परिक तौर-तरीकों पर ही निर्भर है। पारम्परिक तरीकों ने हालांकि कृषि को चिंतामुक्त और टिकाऊ बना रखा था लेकिन छोटी होती जा रही जोत, आबादी की विस्मयकारी वृद्धि से उत्पन्न आवश्यकताएं तथा समाज में बढ़ते धन के महत्त्व के कारण किसान भी अब पारम्परिक खेती के भरोसे नहीं रह सकता। इसी क्रम में यह कहा जा सकता है कि कृषि का आधुनिकीकरण भी पूर्णत: सरकार पर ही निर्भर करता है। कृषि में हो रहे क्षरण और आने वाले दिनों की दिक्कतों का आभास तो बजट पूर्व आर्थिक समीक्षा में कराया गया था लेकिन उससे निपटने के उपायों के बारे में नहीं बताया गया था।

18 वीं सदी के प्रख्यात जनगणक थॉमस मॉल्थस ने एक दिलचस्प भविष्यवाणी करते हुए कहा था कि आने वाले समय में भुखमरी को रोका नहीं जा सकता क्योंकि आबादी ज्यामितीय तरीके से बढ़ रही है और खाद्यान्न उत्पादन अंकगणतीय तरीके से। मॉल्थस के उक्त अनुमान की चाहे जितने तरीके से व्याख्या की जाय लेकिन दुनिया भर में इन दिनों जिस तरह खाद्यान्न संकट दिख रहा है, और जिस तरह इस संकट के हौव्वे की आड़ में महंगाई बेरोकटोक बढ़ती जा रही है, उससे निपटने का आधारभूत तरीका कृषि व कृषि आधारित सह-उत्पाद बढ़ाना ही हो सकता है। भारतीय कृषि की एक बिडम्बना यह भी है कि देश का सबसे बड़ा और अति महत्त्वपूर्ण क्षेत्र होने के बावजूद यह अपने विषेशज्ञों पर नहीं बल्कि उन नौकरशाहों पर निर्भर है जिनके बारे में यह मान लिया गया है कि देश की समस्त बीमारियों की एकमात्र दवा वही हैं। यह तथ्य चौंकाने वाले हैं कि महत्त्वपूर्ण कृषि नीतियां निर्धारित करने वाली कुर्सियों पर कृषि विषेशज्ञ नहीं आईएएस अधिकारी बैठे हुए हैं। ऑल इंडिया फेडरेशन ऑफ एग्रीकल्चर एसोसिएशन के एक प्रवक्ता का दावा है कि देश में ऐसे एक हजार पदों पर नौकरशाह काबिज हैं।

जिस अन्न सुरक्षा को लेकर आज पूरा संसार विचलित है वह तो हमारी कृषि नीति की मुख्य रीढ़ थी। प्रत्येक गांव में केवल मानव ही नहीं पशुओं के लिए चरणोई और तालाब बनाए गए थे। इतने प्रकार के अनाज, दालें, तिलहनी फसलें, साग सब्जियों और फलों का जाल देशभर में फैला हुआ था। कम पानी में पकने वाली और कई बीमारियों को दूर रखने वाली हमारी शानदार फसलें जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का, कोदो, कुटकी, तिवड़ा, तिल, अलसी, रामतिल, राजगिरा, कुलथी, कुट्टू आदि थे। गांव-गांव में रोजगार देने वाला मोटे धागे का कपास, घानी, चक्की, चरखे, करघे, साबुन, तेल, दंतमंजन, सुतली, नारियल की रस्सी, चमड़े के जूते, आयुर्वेद की दवाइयां, हल, बक्खर, गेती, फावड़े, तगारी बनाने के उद्योग और फसलों से कच्चा माल निकालकर ग्रामोद्योग चलाया जाता था और वह भी धेलाभर बिजली खर्च किए बिना मात्र मानव और पशुओं के श्रम से। यदि हम भारत का इतिहास देखें तो पता चलता है कि अंग्रेजों ने अपने देश की मिलों का पेट भरने और व्यापार-व्यवसाय बढ़ाने के लिए हमारी अन्नसुरक्षा के घेरे को तोड़ा। अनाज की जगह कपास, गन्ना, फूलों, मसालों और नील की खेती हमारे किसानों से करवाई। ये सब कुछ सालों-साल चलता रहा और फिर जब देश में अकाल की स्थिति हुई तब भुखमरी के नाम पर मॅक्सिकन गेहूं के बौने बीज यहां लाकर बोए गए। उनकी पैदावार बढ़ाने, रासायनिक खाद, कीटनाशक और यंत्रों के उद्योग का जाल देश में फैला। इसका उल्टा असर ग्रामीण भारत पर पड़ा। खेती महंगी होने लगी। गांवों में पानी, लकड़ी, चारा और मजदूर कम होने लगे। गांव खाली होने लगे, शहरों की आबादी बढ़ी। इसी को विकास माना जाने लगा। महाविद्यालयों का काम मात्र इन फसलों की सुधारी गई किस्मों का प्रजनन और चयन तक सीमित होकर रह गया।

एक अन्य तर्क यह भी दिया जाता है कि सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) बढ़ाना है तो गांवों को खाली कराना ही होगा। इसके लिए अमेरिका का उदाहरण देकर समझाया जाता है कि अमरीका में केवल एक फीसदी लोग यानी करीब सात लाख लोग कृषि कार्य में लगे हैं। इसके बावजूद अमरीका सबसे बड़ा कृषि उत्पादों की पैदावार वाला देश है। हमारे देश में सभी की मानसिकता को ऐसा बना दिया गया है कि लोग खेती को भुलाने की कोशिश में लगे हैं। हाल ही में रिजर्व बैंक के गवर्नर रघुराम राजन ने भी कहा था कि भारत का असली विकास तभी होगा जब लोगों को खेती से हटाकर उद्योगों से जोड़ा जाए। लेकिन जब फिर हम आंकड़ों की बात करते हैं तो बातें उलझ जाती हैं। जो लोग खेती से हटे वे मजदूर बना दिए गए जो किसान सबका पेट भरता है हम उसे ही खाद्य सुरक्षा देने की बात कर उसका मजाक उड़ाते हैं। जरा सोचिये किसी राजा को भिक्षा दी जा सकती है?

यह कितना हास्यापद है कि हर जीवित प्राणी कृषि या सह-कृषि पर निर्भर है। फिर भी किसानों की हालत चिंताजनक है। किसान करोड़ों लोगों का पेट भरते हैं फिर भी हर जगह किसान को बेचारा कहा जाता है। क्या सरकारें किसान को अन्नदाता कहने या मुवावजा बांटने के अलावा भी कुछ करती हैं? क्यों नहीं किसान को हम फसल उत्पादक कहते जिसे अपने उत्पादन को बेचने के लिए किसी साहूकार का मुंह न ताकना पड़े! बातें तो कई हैं लेकिन जब तक सरकारें किसी बड़ी इच्छाशक्ति से काम नहीं करेंगी तब तक हालात ऐसे ही रहेंगे। उम्मीद करिए कि आने वाले दिनों में हालात सुधरें, नहीं तो रोटी भी सुपर मार्किट से खरीदनी पड़ेगी।

-लेखक इंटरनेशनल सोसिओ पॉलिटिकल रिसर्च ऑर्गनाइजेशन, नई दिल्ली में रिसर्च फैलो हैं

कृषिक्षेत्र के जोखिमों के कारण वर्तमान में देश की युवा किसान पीढ़ी बहुत तेजी से खेतीबाड़ी को त्याग रही है। वह नकद मजदूरी के कामों को करने के लिये अपने गांवों को छोड़कर शहरों की ओर पलायन कर रही है। ऐसे में यह सवाल स्वाभाविक तौर पर हमारे सामने खड़ा हो जाता है कि हमारे देश के नीति–नियंताओं को ऐसे कौन से नीतिगत उपाय अपनाने चाहिये जिनसे कि कृषि के जोखिमों को कम किया जा सके।

जोखिम से बचने के लिए जरूरी है कृषि बीमा

■ **कृषि चौपाल**

भारत की कृषि को आज इक्कीसवीं सदी में भी मानसून का जुआ कहा जाता है। देश का अधिकांश कृषिक्षेत्र आज भी सिंचाई साधनों के अभावों के चलते बहुत हद तक बारिश पर निर्भर करता है। मौसम की मार का सबसे ज्यादा असर खेतीबाड़ी पर ही पड़ता है। खेतीबाड़ी के बुरे प्रभावों का असर देश की पूरी अर्थव्यवस्था पर होता है। अर्थव्यवस्था से आम या खास सभी देशवासी जुड़े होते हैं परंतु मध्यमवर्गीय और निचले तबके के लोगों पर अर्थव्यवस्था के बदलावों का ज्यादा प्रभाव होता है।

देश के सकल उत्पादन में कृषि की हिस्सेदारी 14 फीसदी के आसपास है। लगभग 70 प्रतिशत आबादी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषिक्षेत्र में रोजगार के लिये नियोजित है। कृषिक्षेत्र के उतार–चढ़ावों का असर देश की जनसंख्या के एक बड़े भाग पर पड़ना लाजिमी है। इस क्षेत्र के जोखिमों के कारण वर्तमान में देश की युवा किसान पीढ़ी बहुत तेजी से खेतीबाड़ी को त्याग रही है। वह नकद मजदूरी के कामों को करने के लिये अपने गांवों को छोड़कर शहरों की ओर पलायन कर रही है। ऐसे में यह सवाल स्वाभाविक तौर पर हमारे सामने खड़ा हो जाता है कि हमारे देश के नीति–नियंताओं को ऐसे कौन से नीतिगत उपाय अपनाने चाहिये जिनसे कि कृषि के जोखिमों को कम किया जा सके। कृषि के जोखिमों को कम करने से युवा किसानों को खेतीबाड़ी की ओर लौटाया जा सकेगा। उजड़ते गांवों को भी बसाया जा सकेगा।

कृषि उत्पादन कई कारकों पर निर्भर करता है। जैसे कि किसान द्वारा कौन सी खाद इस्तेमाल की गयी है, मौसम का मिजाज कैसा है, मिट्टी कैसी है, बीज कौन सा उपयोग किया जा रहा है, कीटनाशक कैसे और किस प्रकार इस्तेमाल किये गये हैं। साथ ही सूखे और बाढ़ की स्थितियों के लिये भी किसान को तैयार रहना होता है। हमारे देश में प्रकृति से जुड़े कारकों के अलावा कृषि के तौर–तरीकों का भी खेतीबाड़ी पर बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ता है। देश की काश्तयोग्य भूमि का केवल 37 फीसद भाग ही सिंचाई सुविधाओं से लैस है। जाहिर है कि सिंचाई सुविधाओं के अभावों के कारण आधुनिक कृषि को अपनाना सभी किसानों के लिये संभव ही नहीं है। आधुनिक कृषि संसाधनों के अभावों के चलते ग्रामीण कृषकों की अपनी समस्याएं हैं। इन समस्याओं के चलते ग्रामीण इलाकों के किसानों को कर्ज देने की क्रियाओं पर भी काफी प्रभाव पड़ता है। कई बार किसान ब्याज देने की स्थिति में भी नहीं होते तो कई बार सूखा–बाढ़ आदि के कारण ये कर्ज देना भी नहीं चाहते। हमारे देश की कर्ज प्रदान करने की दोषपूर्ण प्रणाली के चलते किसानों को मूल अदा करने में भी अनेक प्रकार की परेशानियों का सामना करना पड़ता है, वहीं दूसरी ओर अनेक बार किसान भी कर्ज अदायगी में रियायत की मांग करते हैं। जाहिर है कि किसानों की स्थिति का असर कर्ज देने वाले संस्थानों और बैंकों आदि पर भी पड़ता है।

स्पष्ट है कि मौसम की अनियमितताओं से किसानों को बचाया जाना बहुत आवश्यक है। इससे केवल किसानों को ही फायदा नहीं होगा बल्कि कृषि से जुड़ी समूची अर्थव्यवस्था को लाभ होगा। किसानों को जोखिम से बचाने के लिये बीमा एक अच्छा उपाय है। साधारण बीमा कंपनियां हालांकि किसानों और फसलों के लिये अनेक बीमा पॉलिसियां बाजार में प्रस्तुत कर चुकी हैं। इन पॉलिसियों को सावधानीपूर्वक अपनाकर हमारे किसान भाई अपनी खेती के जोखिम को बहुत हद तक कम कर सकते हैं। किसानों के वास्ते प्रचलित कृषि बीमा दो प्रकार का होता है, मौसम बीमा और फसल बीमा।

मौसम बीमा

मौसम बीमा से किसान निरंतर बदलते हुए मौसम

से होने वाले दुष्प्रभावों से होने वाले नुकसान की भरपाई कर सकता है। दरअसल यह एक सूचकांक आधारित पॉलिसी है जो किसानों को मौसम में होने वाले विभिन्न बदलावों जैसे- हवा की तेजी, बारिश, आर्द्रता आदि से होने वाले नुकसानों से सुरक्षा कवच प्रदान करती है। इस पॉलिसी के तहत् कृषक बैंक, वित्तीय संस्थानों, कृषि के लिये कर्ज प्रदान करने वाली विभिन्न कंपनियों आदि से जोखिम से सुरक्षा प्राप्त कर सकता है। इस पॉलिसी की खासियत यह है कि बीमित किसान नुकसान होने की हालत में बीमित खेत की फसल की पूरी कीमत सहित लागत भी वसूल कर सकता है। दावे के भुगतान राशि का निर्धारण भौगोलिक एवं मौसम के ऑकड़ों के अध्ययन के बाद तय किया जाता है। साथ ही यदि मौसम सूचकांक में होने वाले बदलावों से खेती की लागत बढ़ जाती है, तो वह भी वसूली जाती है।

रबी फसल हेतु किसान पाला पड़ने, तेज हवाओं या बेमौसम बारिश होने से होने वाले नुकसान से अपने आप को सुरक्षित कर सकता है। परंतु बीमा कराते समय किसान भाई इस बात का ध्यान रखें कि दावे के भुगतान के लिए तमाम राष्ट्रीय मौसम केंद्रों से इकट्ठा किये गये विभिन्न मौसम संबंधी ऑकड़ों को आधार बनाया जाता है।

फसल बीमा

फसल बीमा के तहत् विभिन्न बीमा कंपनियां किसी भी हालत में विभिन्न फसलों के उत्पादन पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव की हालत में किसानों को बीमा की सुविधा प्रदान करती हैं। जैसे कि फसल को आग लगने से होने वाले नुकसान, बिजली गिरने पर, आंधी-तूफान से होने वाली क्षति, समुद्री तूफान से होने वाली क्षति, बाढ़, भू-स्खलन, सूखा पड़ने पर और फसलों को विभिन्न बीमारियों से होने वाली क्षतियों से किसान को सुरक्षा प्रदान करती हैं। फसल पैदा होने के बाद किसी प्राकृतिक आपदा से होने वाली हानियों से भी संपूर्ण सुरक्षा इस बीमा पॉलिसी के अंतर्गत प्राप्त की जा सकती है।

वर्तमान भाजपा सरकार ने किसानों को अपनी फसलों आदि का बीमा करवाने हेतु उत्साहित करने के लिये बीमा कंपनियों को समय-समय पर कुछ खास निर्देश भी दिये हैं। यदि यह निर्देश पालन के स्तर पर विभिन्न बीमा कंपनियों द्वारा अमल में लाये जाते हैं तो यह काफी सुखद होगा कि किसानों को बार-बार अपनी फसलों से होने वाले नुकसान से बचने के लिये बीमा हासिल करने में काफी सहूलियतें हो जायेंगी। ●

फसल बीमा राष्ट्रीय कार्यशाला में नुकसान के आकलन पर नहीं बन पायी एक राय

कृषि बीमा योजना के अंतर्गत विभिन्न फसलों के नुकसान के आकलन की खामियों को दूर करने हेतु कृत्रिम उपग्रह आधारित प्रणाली पर भी संदेह जताया जाने लगा है।

■ **कृषि चौपाल**

मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में आयोजित फसल बीमा राष्ट्रीय कार्यशाला में खेती में नुकसान को घटाने के उपायों और क्षतिपूर्ति संबंधी केंद्र के फसल बीमा मसौदे के अनेक प्रावधानों को नकार दिया गया। यही नहीं कृषि बीमा योजना के अन्तर्गत विभिन्न फसलों के नुकसान के आकलन की खामियों को दूर करने हेतु कृत्रिम उपग्रह (सेटेलाइट) आधारित प्रणाली पर भी संदेह जताया जाने लगा है। इस दो दिवसीय राष्ट्रीय सम्मेलन में फसलों के नुकसान के आकलन की जिम्मेदारी स्थानीय ग्राम पंचायतों या न्याय पंचायतों व सहकारी समितियों को सौंपने पर जोर-शोर से विचार विमर्श हुआ।

पिछले दिनों फसल बीमा और फसलों को होने वाले किसी भी प्रकार के नुकसान के सर्वेक्षण से संबंधित दो दिवसीय राष्ट्रीय सम्मेलन भोपाल में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में भारत के अलावा अन्य देशों के कृषि बीमा विशेषज्ञों ने भी अपनी राय व्यक्त की। सम्मेलन में सिफारिश किये गये अधिकतर विदेशी फसल बीमा मॉडल भारत की काश्तकारी एवं जलवायविक परिस्थितियों में कृषि के अनुकूल नहीं माने गये। सम्मेलन में शामिल किसान प्रतिनिधियों द्वारा प्राकृतिक आपदाओं के कारण फसलों के नुकसान हेतु कराये जाने वाले आकलनों और उनकी प्रक्रियाओं में अनेक तरह की विसंगतियां उजागर की गयी। वर्तमान सर्वेक्षण पद्धति के अंतर्गत परंपरागत सरकारी प्रणाली को हालांकि सही तो माना गया, परंतु इसमें सर्वेक्षकों द्वारा की जाने वाली गलतियों को और विलबित प्रक्रिया को रेखांकित किया गया। नुकसान के आकलन के लिए राजस्व महकमे के पटवारियों और लेखपालों पर निर्भर गिरदावरी पर इससे पहले भी अनेक बार संदेह जताया जा चुका है। इस सम्मेलन में भी गिरदावरी के मौजूदा तौर-तरीकों में सुधार के अनेक उपाय सुझाए गये।

संपन्न सम्मेलन में मेजबान सूबे मध्य प्रदेश सरकार की ओर से यह राय दी गयी कि केंद्रीय कृषि मंत्रालय द्वारा तैयार किये गये मसौदे में बदलाव करते हुए फसलों को होने वाले नुकसान और पैदावार में होने वाली गिरावट तथा कमी का आकलन और विवरण प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी ग्राम पंचायतों को सौंपी जानी चाहिये।

बीमा कंपनियों के कामकाज और रीति-नीति पर मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह ने आपत्ति जताते हुए कहा कि कंपनियां तो लाभ के लिए इस क्षेत्र में आई हैं। वह जुटाए गए प्रीमियम का 80 फीसद ही दावे के रूप में दे सकती हैं। चौहान ने सुझाव देते हुए कहा कि इसके लिए राज्यों में किसान कल्याण कोष का गठन कर दिया जाए। इसमें राज्यों के साथ केंद्र की भी भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। उन्होंने अपनी ओर से सालाना ढाई हजार से तीन हजार करोड़ रुपये कोष में जमा करने का सुझाव दिया। केंद्र से इतनी राशि और जोड़ दी जाए तो बड़ी निधि तैयार हो सकती है। इसमें किसानों से भी प्रीमियम के तौर पर सालाना कुछ न कुछ राशि अवश्य जमा कराई जाए।

मध्य प्रदेश सरकार ने अपने इस सुझाव के समर्थन में तर्क दिया कि इस प्रकार के प्रयोग विदेशों में किये जा चुके हैं जो कि काफी सफल रहे हैं।

सरकार की ओर से नुकसान का सर्वेक्षण करने हेतु कृत्रिम उपग्रह आधारित प्रणाली के इस्तेमाल पर ज्यादा जोर दिया गया। इस सम्मेलन में शामिल इसरो आदि संस्थानों के वैज्ञानिकों ने इस प्रणाली को विस्तार से व्याख्यायित करते हुए इसकी सीमाओं को रेखांकित किया। संपन्न सम्मेलन में भारत सहित अन्य देशों के कृषि बीमा विशेषज्ञों के अलावा भारत की प्रमुख बीमा कंपनियों के प्रतिनिधियों और केंद्र तथा राज्य सरकारो के नीति निर्माताओं ने भी शिरकत की। ●

गैर योजनागत दोहन से पैदा हो रहा है जल संकट

दरअसल भूमिगत जल स्रोतों का गैर योजनागत दोहन हो रहा है तथा देश के राजनीतिज्ञ अपने वोट बैंक को सुरक्षित रखने के लिये ट्यूबवैल जैसे उपकरणों और बिजली की जरूरतों पर बड़े पैमाने पर छूट देने की नीति को बनाये रखना चाहते हैं। हरित क्रांति के प्रारंभ के साथ ही मिली इस छूट के कारण हमारे देश में भूमिगत जल से सिंचाई के तरीकों में तेजी से बढ़ोत्तरी हुई है। बरसात की कमी होने पर भूमिगत जल पर निर्भरता ज्यादा बढ़ जाती है।

■ **कृषि चौपाल**

आज की जीवनशैली में कुओं और बावड़ियों को हमने भले ही बिसरा दिया हो परंतु आज भी इनका महत्व कम नहीं हुआ है। देशव्यापी स्तर पर कुओं के बारे में किये गये एक हालिया शोध से जो निष्कर्ष निकाले गये हैं वे काफी चौंकाने वाले हैं। देशवासियों को स्मरण होगा कि पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने एक भाषण के दौरान कहा था कि भविष्य में सीमाओं के विस्तार के लिये युद्ध हो या न हो परंतु पानी के लिये विश्व युद्ध होगा, यह निश्चित है। श्री वाजपेयी का यह कथन कुओं पर किये गये शोध से निकले निष्कर्षों से और भी पुख्ता होता दिखायी देता है।

इस शोध से यह पता चला है कि पिछले लगभग एक दशक के दौरान भारत के भूमिगत जल स्तर में 54 फीसदी की गिरावट आयी है, तथा दो दर्जन शहर गंभीर पेयजल आपूर्ति संकट से जूझ रहे हैं। नासा द्वारा 2003 से 2013 के मध्य किये गये अध्ययन पर आधारित ऑकड़ों के अनुसार गंगा-ब्रह्मपुत्र बेसिन का जल स्तर -19.564 मिलीमीटर प्रतिवर्ष तथा सिंधु बेसिन का जलस्तर प्रतिवर्ष -4.263 मिलीमीटर प्रतिवर्ष की रफ्तार से घट रहा है। नासा के उपग्रहों द्वारा पिछले दिनों जारी की गयी तस्वीरों ने हमारे देश की भू-जल स्थिति को लेकर चिंताओं को और बढ़ा दिया है। नासा द्वारा ली गयी तस्वीरों के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि भारत-पाकिस्तान में सिंधु नदी के बेसिन क्षेत्र में अर्थात् पश्चिमोत्तर भारत में भूमिगत जलस्तर में बहुत तेजी के साथ कमी आती जा रही है। गौरतलब है कि इससे पूर्व सन् 2009 में भी नासा द्वारा इसी प्रकार का एक अध्ययन कर हमको सचेत किया गया था। उस अध्ययन रिपोर्ट में यह स्पष्ट किया गया था कि भारत के उत्तरी राज्यों पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, दिल्ली और राजस्थान में सिंचाई के कारण 108 क्यूबिक किलोमीटर भूमिगत जल समाप्त हो चुका है उस दौरान जारी ऑकड़ों से भी हमारे देश के नीति नियंताओं ने कोई सबक नहीं लिया।

गौरतलब है कि मनुष्यवर्ती पृथ्वी पर उपलब्ध समूची जलसंपदा का मात्र 3 प्रतिशत जल ही मृदुजल है और पीने योग्य है। लेकिन भारत में जहां कि सदानीरा हिमनदों से निकलने वाली नदियों की अच्छी संख्या है और हिमालय पर बर्फ के रूप में मृदुजल का विशाल भण्डार मौजूद है, वहां भी जल संकट गहराता जा रहा है। जलसंकट को लेकर एक सच यह भी है कि हमारी जल नीतियों ने भी इस संकट को बढ़ाने का काम किया है। नासा द्वारा किये गये अध्ययनों के अगुआ मैट रोडेल के मुताबिक उत्तर भारत कृषि उत्पादकता के लिये पूर्णतः सिंचाई पर निर्भर हो गया है। उन्होंने और उनकी टीम ने अपने निष्कर्षों में स्पष्ट किया है कि यदि समय रहते भूजल के संतुलित उपयोग के कदम नहीं उठाये गये तो इस क्षेत्र के लगभग 12 करोड़ लोगों को आने वाले दिनों में जलसंकट के बुरे परिणामों के लिये तैयार रहना होगा। एक ओर जहां कृषि पैदावार में गिरावट आयेगी वहीं पेयजल के मामले में भी परेशानियां बढेंगी।

दरअसल भूमिगत जल स्रोतों का गैर योजनागत दोहन हो रहा है तथा देश के राजनीतिज्ञ अपने वोट बैंक को सुरक्षित रखने के लिये ट्यूबवैल जैसे उपकरणों और बिजली की जरूरतों पर बड़े पैमाने पर छूट देने की नीति को बनाये रखना

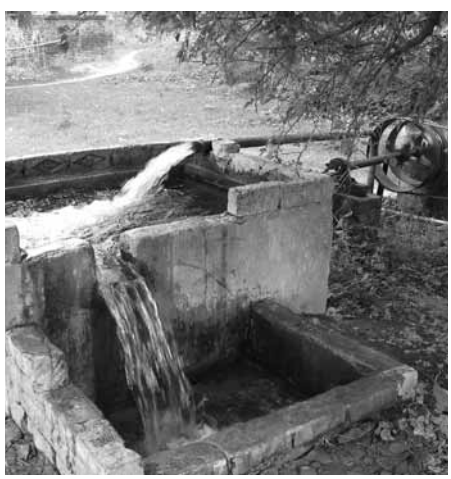

चाहते हैं। हरित क्रांति के प्रारंभ के साथ ही मिली इस छूट के कारण हमारे देश में भूमिगत जल से सिंचाई के तरीकों में तेजी से बढ़ोत्तरी हुई है। बरसात की कमी होने पर भूमिगत जल पर निर्भरता ज्यादा बढ़ जाती है। गौरतलब है कि जुलाई 2012 में भारत के एक बड़े भू-भाग में ग्रिड के फेल होने से भारी बिजली की किल्लत पैदा हो गयी थी। विशेषज्ञों ने ग्रिड फेल होने के कारणों का अध्ययन करते हुए स्पष्ट किया था कि इसका कारण उत्तरी भारत में उस दौरान पड़ा भयंकर सूखा रहा। सूखे के चलते उस दौरान पानी की कमी हो गयी और उत्तर भारत के किसानों ने अपनी फसलों को सींचने के लिये भूमिगत जल सिंचाई साधनों और बिजली का भारी मात्रा में उपयोग किया।

देश के अनेक इलाकों में पेयजल और सिंचाई की मांग और आपूर्ति की स्थिति में भी भारी असंतुलन है। शहरी क्षेत्रों में जहां यह मांग 135 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में यह मांग 40 लीटर है। एक अनुमान के मुताबिक इक्कीसवीं सदी के मध्य तक भारत की शहरी आबादी देश की कुल आबादी का 50 फीसद हो जायेगी। स्पष्ट है कि तब जल संकट से जूझ रहे क्षेत्रों में भारत के लगभग 90 करोड़ लोग निवास कर रहे होंगे। जाहिर है कि जल को लेकर भारत के राज्यों में विवाद बढ़ जायेंगे, जो कि आज भी कभी-कभी काफी अप्रिय स्थिति पैदा कर देते हैं। वर्तमान में भूमिगत जलस्रोतों का कुल 55 फीसद उपयोग में है और सतही जल का बहुत सा भाग बांधों द्वारा उपयोग कर लिया जाता है। जिसे बिजली बनाने और नहरें निकालने में प्रयोग किया जा रहा है। विशालकाय बांधों के निर्माण के कारण अनेक नदियों का जलप्रवाह भी दुष्प्रभावित हुआ है। आज के दौर में भूमिगत जलराशि का 80 प्रतिशत भाग सिंचाई पर खर्च होता है। शहरी क्षेत्रों में 30 प्रतिशत तथा गांवों में 70 प्रतिशत जल आपूर्ति भूमिगत जल पर निर्भर है।

भारत में कुछ बड़ी नदियां हैं परंतु इनकी जलराशि का उपयोग प्राकृतिक कारणों से हम नहीं कर पा रहे हैं। भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्र के एक बड़े भू-भाग में बहने वाली विशाल ब्रह्मपुत्र नदी का हम केवल चार फीसद भाग ही उपयोग में ला पाते हैं। इसी प्रकार और भी अनेक दुर्गम क्षेत्रों में बहने वाली नदियां है जिनके जल का पूर्ण उपयोग नहीं हो पा रहा है। समय रहते हमें अपनी जलनीतियों पर पुनर्विचार करना होगा। सिंचाई की तकनीकों को भी सुधारना होगा तथा जल के दुरुपयोग की आदतों पर भी लगाम लगानी होगी, तभी हम भावी जलसंकट से बच सकते हैं। ●

महंगाई डायन खाये जात है

■ **कृषि चौपाल**

विभिन्न खाद्य वस्तुओं की कीमतों में विगत अप्रैल माह से जारी प्राकृतिक प्रचण्डताओं के कारण निरंतर बढ़ोत्तरी हो रही है। विगत अप्रैल माह में अतिवृष्टि और ओलाबारी के कारण रबी की फसलों को काफी नुकसान पहुंचा था। उस नुकसान से उबरे भी नहीं थे कि मानसून के कमजोर पड़ने तथा देश के विभिन्न हिस्सों में बरसात की अनियमितता ने खाद्यान्नों की कीमतों और अवैध जमाखोरी को हवा देने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। पिछले सीजन में दलहन की फसलों के नुकसान से पैदावार में गिरावट की आशंकाएं जिंस बाजार पर भारी पड़ रही हैं।

कृषि जिन्सों के विश्लेषकों का अनुमान है कि इस वर्ष पिछले वर्ष के मुकाबले दलहनी फसलों की कुल पैदावार में लगभग 10 लाख टन तक की कमी आयेगी। जाहिर है कि आपूर्ति प्रभावित होगी। आपूर्ति और मांग के असंतुलन को दूर करने के लिये सरकार को आयात पर निर्भरता बढ़ानी होगी। आयात पर निर्भरता बढ़ने का सीधा असर अंतर्राष्ट्रीय बाजार में दाल की कीमतों की तेजी पर पड़ेगा।

इसी प्रकार सब्जियों की कीमतें भी अन्तर्राज्यीय स्तर पर देश के विभिन्न क्षेत्रों में

दिल्ली सरकार ने दाल भंडारण मामले पर केन्द्र को लिखा पत्र

दालों की जमाखोरी के विरुद्ध दिल्ली सरकार द्वारा की गयी कार्रवाई से अनेक कारोबारी तिलमिला गये हैं। व्यापारियों की इस तिलमिलाहट ने दिल्ली सरकार को केंद्र को एक पत्र लिखने के लिये बाध्य कर दिया है। कारोबारियों की दलील पर दिल्ली सरकार ने केंद्र को भेजे एक पत्र में अन्य राज्यों में भी दाल भण्डारण की सीमा तय करने की मांग की है।

गौरतलब है कि दाल की कीमतों में अचानक वृद्धि से दिल्ली सरकार के कान खड़े हो गये थे। पिछले दिनों सरकार के खाद्य एवं आपूर्ति विभाग ने मध्य दिल्ली स्थित अनाजों के सबसे बड़े बाजार खारी बावली व नया बाजार में अचानक छापेमारी अभियान चलाया।

इस अभियान में केवल दो व्यापारियों के पास से 27 हजार क्विंटल से ज्यादा दालों का भण्डार पकड़ा गया। परंतु जब इन्हीं में से उन व्यापारियों के यहां जिनके वाह्य दिल्ली में गोदाम थे, छापेमारी की गयी तो इन गोदामों में लाखों क्विंटल दाल भण्डारित की हुई मिली।

गौरतलब है कि दिल्ली के कारोबारियों को अधिकतम दो हजार क्विंटल तक दाल भण्डारित करने की अनुमति है। लेकिन यह पाबंदी देश के अन्य राज्यों मसलन- महाराष्ट्र, राजस्थान और मध्य प्रदेश जैसे विशाल सूबों में लागू नहीं है। इस व्यवस्था के मद्देनजर दिल्ली सरकार के खाद्य एवं आपूर्ति विभाग मंत्री आसिम अहमद खान ने कहा है कि अन्य सूबों के थोक कारोबारियों पर भी निर्धारित मात्रा तक खाद्यान्न भण्डार रखने की सीमा निर्धारित की जानी चाहिये।

सभी दालों की कीमतें आसमान छू रही हैं। प्याज और टमाटर जैसी आम सब्जियां भी आम आदमी की खरीददारी से बाहर हो रही हैं। सभी खाद्य तेलों की कीमतें भी बढ़ गयी हैं। लेकिन सबसे ज्यादा रूलाया है दाल ने। उत्तर भारत और पूर्वी भारत में सबसे ज्यादा पसंद की जाने वाली अरहर की दाल की कीमत जहां सौ रुपया प्रति किलों की हद को पार कर गयी हैं, वहीं अन्य दालें भी या तो सौ रुपये प्रति किलो के पार हैं या इसके आसपास बिक रही हैं। सरसों, अलसी, तिल, सूरजमुखी और अन्य खाद्य तेलों की कीमतें भी 100-125 रुपये प्रति किलो की सीमा को पार करने की ओर अग्रसर हैं। भारत के अधिकांश शहरी इलाकों में प्याज और टमाटर असमान तो रहेंगी ही इनके भविष्य में और महंगे होने के भी आसार हैं। सबसे ज्यादा असर प्याज और टमाटर तथा आलू जैसी आम सब्जियों पर पड़ा है।

पिछले साल के इन्हीं दिनों की अपेक्षा इस वर्ष यह सब्जियां लगभग डेढ़गुनी बढ़ी कीमतों पर बिक रही हैं। यदि खरीफ के मौसम में मानसून अनियमित होता है तो गेहूं और धान जैसे आम खाद्यान्नों की कीमतें भी बढ़ेंगी यह निश्चित है। महंगाई बढ़ने का सबसे ज्यादा काला पक्ष यह है कि इससे कृषि जिन्सों के मूल उत्पादकों यानि किसानों को कोई लाभ नहीं होता है। केवल आढ़तिये, बिचौलिये और व्यापारी ही इसका लाभ उठाते हैं। ●

वृक्षारोपण के लिए दिये गये धन का बेजा इस्तेमाल

वृक्षारोपण के कार्यक्रमों के नाम पर खर्च किये जाने वाले धन का किस तरह बेजा इस्तेमाल होता है, इसकी मिसाल हैं बिहार, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब और उत्तराखंड। बिहार में पौधरोपण हेतु आवंटित पूंजी में से 4.5 करोड़ रुपये का उपयोग रिहायशी भवन बनाने, गाड़ियां खरीदने में किया गया, जबकि हरियाणा में आवंटित की गयी राशि वन भवन की इमारत के रखरखाव पर खर्च कर दी गयी।

■ कृषि चौपाल

हमारे सामाजिक जीवन में वृक्षों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। वृक्षों को उनके गुणधर्मों के आधार पर विभिन्न धार्मिक कार्यों में भी उपयोग किया जाता है। जैसे कि केला, गन्ना, पीपल, वटवृक्ष, पद्म और आम के वृक्षों फलों, पत्तियों टहनियों आदि का प्रयोग शादी-विवाह, हवन आदि के अवसरों पर बहुधा विविध रूप में इस्तेमाल किया जाता है। पर्यावरण संरक्षण में तो वृक्षों की भूमिका को आज पूरा विश्व स्वीकार कर चुका है। परंतु जब तक हम अपने परिवेश और पर्यावरण से पेड़ों के संबंधों को समझा पाते तब तक हमने विकास के लिये भारी पैमाने पर जंगलों को उजाड़ डाला था। आज अनेक वृक्षों और वनस्पतियों की प्रजातियां तो लुप्त ही हो चुकी हैं और भोजपत्र जैसे बहुउपयोगी वृक्ष विलुप्तता के कगार पर हैं। जबसे वृक्षों और वनस्पतियों के महत्व को पर्यावरण संरक्षण के परिप्रेक्ष्य में वैज्ञानिक तरीके से समझ गया तब से ही विश्व की मानव सभ्यताओं ने इस ओर ध्यान देना शुरू किया। हमारे परिवेश और पर्यावरण से पेड़-पौधों के इस गहन संबंध को समझते हुए वैश्विक स्तर पर प्रतिवर्ष पांच जून को पर्यावरण दिवस मनाने की शुरूआत की गयी। पर्यावरण दिवस के आसपास भारत में तो वृक्षारोपण कार्यक्रमों की खासकर सरकारी कार्यक्रमों की बाढ़ सी आ जाती है। सभी जानते हैं कि वृक्षारोपण कार्यक्रमों के लिए विभिन्न सरकारी विभागों द्व ारा भारी-भरकम राशि खर्च की जाती है। वास्तव में अनेक बार यह वृक्षारोपण कार्यक्रम केवल कागजों पर ही सम्पन्न कर लिये जाते हैं।

पेड़-पौधे लगाना मानव समाज की परंपराओं में शामिल रहा है। अनेक शुभ अवसरों पर भारत में भी विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न वृक्षों का रोपण किया जाता है। आज जबकि सरकारी संरक्षण में पेड़-पौधे लगाने के कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं परंतु भारत में वनक्षेत्र निरंतर घट रहा है। जबकि वृक्षारोपण कार्यक्रमों के लिये न तो हमारे पास पूंजी की कमी है और हमारे विशाल देश में भूमि भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है मौजूदा समय में विभिन्न राज्य सरकारों और केंद्र सरकार के पास 38,000 करोड़ रुपये की धनराशि वृक्षारोपण कार्यक्रमों के लिये उपलब्ध है और लगभग एक लाख हेक्टेयर भूमि इसके लिये प्रस्तावित है। इसके बावजूद केंद्र सरकार और राज्य सरकारों द्वारा इस दिशा में कोई भी प्रयास किये जाते हुए नजर नहीं आ रहे हैं।

मानसून पर निर्भर भारत के लिये अपने वन्यक्षेत्र में बढ़ोत्तरी इसलिये भी आवश्यक हो गयी है क्योंकि प्रतिवर्ष देश के अनेक क्षेत्रों में लगभग सूखे जैसी स्थिति हो रही है और जलवायु चक्र अनियत्रित हो गया है। वन्य क्षेत्र के संबंध में वन संरक्षण अधिनियम-1980 सहित अन्य संबंधित कानूनी व्यवस्थाओं में यह स्पष्ट प्रावधान किये गये हैं कि देश के कुल क्षेत्रफल का 33 फीसद वनों से आच्छादित होना चाहिये। वन अनुसंधान संस्थान देहरादून द्वारा वन स्थिति पर प्रस्तुत किये गये एक प्रतिवेदन के अनुसार भारत का वनक्षेत्र 6,97,898 वर्ग किलोमीटर है जो कि भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का केवल 21.23 फीसदी है। वर्तमान केंद्र सरकार और राज्य सरकारों ने ही नहीं बल्कि पूर्ववर्ती सरकारों ने भी वनीकरण को कभी गंभीरता से नहीं लिया।

वन अनुसंधान द्वारा यह रिपोर्ट 2013 में दी गयी थी। भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक द्वारा वर्ष 2012 में दी गयी एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार 1980 से 2012 के मध्य दस लाख हेक्टेयर से भी ज्यादा वन भूमि का इस्तेमाल अन्य विकास कार्यों और निर्माण कार्यों में किया गया है।

वास्तव में भारत में 18वीं सदी के मध्य से ही विभिन्न विकास कार्यों के लिये जंगलों का

भारी पैमाने पर कटान किया जाता रहा है जो आज भी जारी है। यदि समय-समय पर सम्मानित उच्चतम न्यायालय द्वारा वन संरक्षण के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न आदेश पारित नहीं किये गये होते तो स्थिति और भी भयावह होती। हालांकि अनेक आदेशों से भारत के पर्वतीय क्षेत्र के निवासियों को कतिपय हानियां भी उठानी पड़ रही हैं। इधर मौजूदा राजग सरकार द्वारा विगत संसद सत्र के दौरान पैश किये गये क्षतिपूर्ति वृक्षारोपण निधि विधेयक-2015 से काफी उम्मीदें लगायी जा रही हैं। उम्मीद की जा रही है कि इस विधेयक के कानूनी रूप ग्रहण कर लेने पर पौधारोपण की पेचीदगियों को काफी हद तक दूर किया जा सकेगा। इस विधेयक से ये आशा की जा रही है कि सालों से कैपा फंड अथवा वन भूमि के प्रयोग को बदलने के एवज में, वन भूमि की क्षतिपूर्ति के रूप में पौधा रोपण हेतु दी जाने वाली 38,000 करोड़ से भी ज्यादा पूंजी का पारदर्शी तरीके से इस्तेमाल संभव हो सकेगा।

इस पूंजी में से 33,000 करोड़ रुपये विभिन्न राज्यों को प्रदान किये जायेंगे। इसके अलावा मौजूदा सरकार ने ग्रीन इंडिया मिशन के नाम से व्यापक स्तर पर वृक्षारोपण का कार्यक्रम तैयार किया है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि सन 2008 में भी तत्कालीन संप्रग सरकार ने भी यह विधेयक संदद में पेश किया था। परंतु तब यह कानून का रूप नहीं ले पाया था।

वृक्षारोपण के कार्यक्रमों के नाम पर खर्च किये जाने वाले धन का किस तरह बेजा इस्तेमाल होता है, इसकी मिसाल हैं बिहार, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब और उत्तराखंड। बिहार में पौधरोपण हेतु आवंटित पूंजी में से 4.5 करोड़ रुपये का उपयोग रिहायशी भवन बनाने, गाड़ियां खरीदने में किया गया, जबकि हरियाणा में आवंटित की गयी राशि वन भवन की इमारत के रखरखाव पर खर्च कर दी गयी। इसी प्रकार पंजाब को आवंटित पूंजी का एक बड़ा हिस्सा वाहन खरीद में, दिल्ली में मारुति जिप्सी और लैपटाप खरीदने पर तथा उत्तराखंड में आवंटित राशि को वाहनों की खरीद पर और वन महकमे के भवनों के रखरखाव पर खर्च किया गया। वृक्षारोपण और वनाच्छादन सिर्फ पर्यावरण संरक्षण के लिये ही नहीं अपितु जलाकर्षण और पशुचारे आदि के लिये भी बहुत जरूरी है। वृक्ष खेती जो कि कृषि में एक नूतन अवधारणा है, उन क्षेत्रों के लिये काफी फायदेमंद हो सकती है जहां कि अन्न की खेती संभव नहीं है। इन क्षेत्रों में नीम, पीपल, रीठा, तिमिल, बेडू आदि जैसे औषधीय एवं चारे के लिहाज से महत्वपूर्ण वृक्ष लगाये जा सकते हैं। सरकार इस प्रकार के कार्यक्रमों को प्रोत्साहित भी कर सकती है। ●

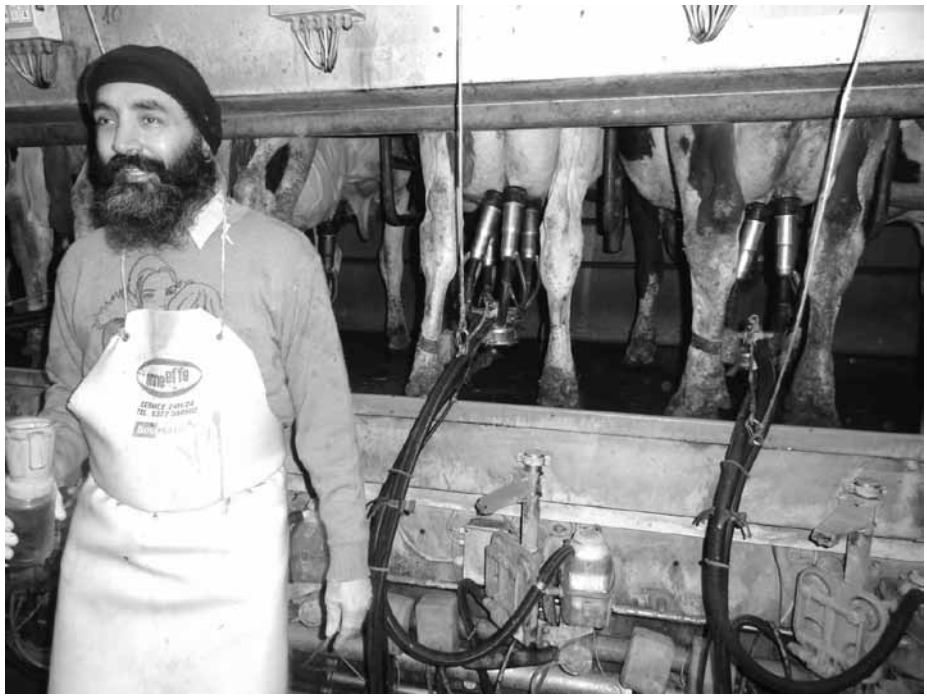

विदेशों में भी कद्र है भारतीयों के हुनर की

भारत के पंजाब प्रांत से अप्रवासी के रूप में आने वाले सिख इटली के मशहूर चीज उद्योग की रीढ़ बन गए हैं। इटली के प्रांत रेजो एमिलिया में पो वैली के समतल मैदान में स्थित नोवेलारा कस्बा पार्मा शहर से बहुत दूर नहीं है। दुनिया के सबसे मशहूर चीज ब्रांड पार्मिजियानो रेजियानों (अंग्रेजी में पार्मेसन) का नाम इसी कस्बे के नाम पर रखा गया है। यूरोपीय संघ के कानूनों के मुताबिक इसे खासकर सीधे दूध से बनाया जाता है और फिर चीज में बदला जाता है।

नोवेलारा की मेयर एलिना कार्लेटी के अनुसार यहां बड़ी संख्या में बसने वाले सिख इस इलाके के मशहूर उत्पाद से नहीं खिंचे चले आए, बल्कि इस इलाके का मौसम उनके लिए मुफीद है।

एलिना कहती हैं, 'वो कहते हैं कि हम यहां रहते हुए महसूस करते हैं जैसे पंजाब में ही हों, क्योंकि यहां पूरा मैदान है और कोई पहाड़ नहीं है। मौसम गर्म है और इसमें नमी है। इसके अलावा खेती भी कमोबेश वैसी ही है।' मेयर के अनुसार सिखों को यह घर से दूर दूसरे घर जैसा लगता है।

पांच साल की उम्र में अपने मां बाप के साथ अमृतपाल सिंह इटली चले आए थे। वो कहते हैं, 'घर पर खेत और गायें हैं और जमीन। इन जानवरों से हमारा एक खास रिश्ता है। इसलिए जब हम यहां आए तो यहां की भाषा न जानते हुए भी यह हमारे लिए सकारात्मक साबित हुआ।' 1980 के दशक में अप्रवासियों की एक लहर चली। कुछ सर्कस में तो कुछ फैक्टरियों में काम करने चले गए और अधिकांश ने डेयरी फार्मिंग को चुना। अमृतपाल के अनुसार चूंकि दूध और गायों का ख्याल रखने में इतालवी भाषा की बाधा नहीं थी और मेहनत करने में हिचक भी नहीं थी, इसलिए यह धंधा उनके लिए आसान साबित हुआ।

भारतीय जिस हुनर के साथ अपने पशुओं की देखभाल करते थे, उससे स्थानीय किसान बहुत प्रभावित थे। जबकि ये अप्रवासी श्रमिक अच्छी-खासी तनख्वाह और मुफ्त रिहाइश से प्रभावित थे। उस समय इटली की अर्थव्यवस्था भी तेजी से बढ़ रही थी।

अमृतपाल खुद को भारतीय-इतालवी मानते हैं, 'आप अपनी जड़ों को नहीं काट सकते इसलिए मैंने इन्हें अपने अंदर जिंदा रखा हुआ है, लेकिन बाकी सब तो इतालवी है।' जहां तक खान-पान का संबंध है, वो दोनों संस्कृतियों का आनंद लेते हैं, 'निश्चित रूप से मैं मांस नहीं खाता लेकिन घर पर भारतीय और इतालवी दोनों तरह के व्यंजन खाते हैं।'

पार्मेसन उत्पादन उद्योग में लगे श्रमिकों में 60 प्रतिशत भारतीय हैं। आर्थिक मंदी ने पहले ही इस उद्योग पर असर डाला है और अधिकांश किसान अब कामगारों को मुफ्त रिहाइश मुहैया कराने में सक्षम नहीं हैं। ●

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना

सिंचाई सुविधाओं को विस्तार देने की कवायद

बुंदेलखंड इलाका जिसमें मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के 16 वर्तमान जिले शामिल हैं, आज से लगभग ढ़ाई दशक पूर्व तक हराभरा कृषि व पशुपालन क्षेत्र हुआ करता था, परंतु आज हालात ये हैं कि पशुओं को भी चारा उपलब्ध नहीं है। यही हालात आज अधिकांश पर्वतीय और पूर्वोत्तर राज्यों की कृषि व्यवस्था के भी हैं। इन राज्यों में जल संसाधन तो उपलब्ध हैं परंतु उनका प्रबंधन नहीं होने के चलते खेतीबाड़ी घाटे का सौदा साबित हो रही है और लोग बड़े पैमाने पर अन्यत्र पलायन कर रहे हैं।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना की खासियत

- **पीएमकेएसवाई योजना में तीन मंत्रालयों- कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास और नदी विकास, जल संसाधन एवं गंगा पुनरुद्धार मंत्रालय विशेष भूमिका निभायेंगे।**
- **ये तीनों मंत्रालय परस्पर मिलकर जल संरक्षण, जल संवर्धन तथा भूमिगत जल संवर्धन व जल वितरण संबंधी अलग-अलग योजनाओं को संयुक्त रूप से पूरा करेंगे।**
- **ग्रामीण विकास मंत्रालय के तहत मृदा व जल संरक्षण के लिये छोटे तालाब, जल संचयन संरचनाओं का निर्माण, बारिश का पानी रोकने हेतु मेड़ों का निर्माण, छोटे बांधों का निर्माण करने के कार्य इस योजना में किये जायेंगे।**
- **कृषि मंत्रालय के अंतर्गत जल उपलब्धता के अनुसार फसलों को पैदा करना, वर्षा के जल का संरक्षण, सूक्ष्म सिंचाई योजनाओं के इस्तेमाल से सिंचाई करने की संभावनाओं को बढ़ाने आदि के योजनागत कार्य किये जायेंगे।**
- **हालिया पुनर्गठित जल संसाधन, नदी विकास व गंगा पुनरुद्धार मंत्रालय के तहत पानी को खेतों तक पहुंचाने हेतु गूलों आदि का निर्माण, उपलब्ध स्रोतों का रखरखाव, जल वितरण प्रणाली का विकास व स्थापना, आवश्यकता पड़ने पर त्वरित सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराना और पुनर्भण्डारण से जुड़ी योजनाओं को अमली जामा पहनाने के काम होंगे।**

■ **कृषि चौपाल**

भारत की खेतीबाड़ी का लगभग 60 फीसदी रकबा आज भी मानसून की मेहरबानी पर है। उत्तरी भारत के मैदानी राज्यों- पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, पश्चिमी उत्तर प्रदेश को यदि छोड़ दिया जाये तो देश के बाकी सूबों में हालात काफी नाजुक हैं। प्रतिवर्ष फसलें या तो सूखे की मार से चौपट हो जाती हैं या फिर अतिवृष्टि, ओलाबारी और बाढ़ की वजह से नष्ट हो जाती हैं। मानसून की चाल बिगड़ने पर किसानों की तो भूखों मरने की नौबत आ जाती है। निम्न मध्यम और निम्न तबके का जीवन भी महंगाई बढ़ने से दूभर हो जाता है।

उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार 2001 से 2011 के दौरान देश में सिंचित भूमि का रकबा केवल 5.7 फीसदी ही बढ़ पाया है, यानि प्रतिवर्ष लगभग 0.57 फीसद। सिंचाई सुविधाओं को विस्तार देने के लिये मौजूदा केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना को मंजूरी दी है। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना अर्थात् संक्षेप में पीएमकेएसवाई प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की महत्वाकांक्षी योजना है, परंतु अफसोस इस बात का है कि इस योजना पर मीडिया में और राजनीतिक हलकों में यहां तक कि किसान राजनीतिक परिदृश्य में भी काफी कम चर्चा हो रही है। ऐसा नहीं है कि इससे पहले सिंचाई पर कोई काम नहीं हुआ, लेकिन एक अभियान के तौर पर सिंचाई को लेकर पहली बार देश में काम होने के आसार नजर आ रहे हैं। स्वयं प्रधानमंत्री श्री मोदी इस योजना की मॉनिटरिंग का जिम्मा संभाले हुए हैं। सिंचाई हालांकि राज्य का विषय है, परंतु पीएमकेएसवाई केंद्र सरकार की योजना है। यह योजना इस प्रकार तैयार की गयी है कि इसमें राज्यों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण होगी तथा योजना का क्रियान्वयन राज्यों के सहयोग पर निर्भर होगा।

सिंचाई व्यवस्थाओं के विकास के मामले में हमारे पास जो सरकारी क्षेत्र के प्रयासों के पिछले अनुभव हैं वह काफी अच्छे नहीं कहे जा सकते हैं। दरअसल हम जिसे हरित क्रांति कहकर विभूषित करते हैं, वह उस समय की आबादी

जलाशयों के निर्माण और विभिन्न पुराने जलाशयों के पुनर्संभरण के प्रयासों को भी इस योजना में शामिल किया गया है। पर्वतीय क्षेत्रों और पूर्वोत्तर के राज्यों हेतु इस योजना के अंतर्गत 90 फीसदी केंद्रीय अनुदान की व्यवस्था की गयी है, मात्र 10 फीसदी ही इन राज्यों को खर्च करना होगा।

के अनुसार हरित क्रांति कही जा सकती है और उस दौर को गुजरे आज लगभग चार दशक होने जा रहे हैं। उस दौर में बांध बनाये गये, नहरें निकाली गयीं, ट्यूबवैल स्थापित किये गये, गूलें बनायी गयीं, परंतु बाद में इनके रख-रखाव पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। सिंचाई सुविधाओं को विस्तारित करने का सबसे आसान माध्यम नहरें निकालने और भू-जल दोहन के लिये नलकूप या ट्यूबवैल स्थापित करने को ही माना गया। सिंचाई के पारंपरकि तौर-तरीकों को तिलांजलि दे दी गयी। पारंपरिक सिंचाई के तौर-तरीकों की उपेक्षा का जीता-जागता परिणाम है आज का बुंदेलखंड इलाका, पर्वतीय और पूर्वोत्तर राज्यों की छिन्न-भिन्न कृषि व्यवस्था तथा लगभग विलुप्त हो चुका पशुपालन। बुंदेलखंड इलाका जिसमें मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के 16 वर्तमान जिले शामिल हैं आज से लगभग ढ़ाई दशक पूर्व तक हराभरा कृषि व पशुपालन क्षेत्र हुआ करता था, परंतु आज हालात ये हैं कि पशुओं को भी चारा उपलब्ध नहीं है। गौरतलब है कि बुंदेलखंड में केन नदी बहती है, परंतु वर्तमान में यह और इसकी करीब आधा दर्जन सहायक नदियां लगभग सूख चुकी हैं। यही हालात आज अधिकांश पर्वतीय और पूर्वोत्तर राज्यों की कृषि व्यवस्था के भी हैं। इन राज्यों में जल संसाधन तो उपलब्ध हैं परंतु उनका प्रबंधन नहीं होने के चलते खेतीबाड़ी घाटे का सौदा साबित हो रही है और लोग बड़े पैमाने पर अन्यत्र पलायन कर रहे हैं।

कृषि उत्पादन की वृद्धि दर आठवीं पंचवर्षीय योजना में जहां 4.8 फीसद थी वह आज घटते-घटते 2.5 फीसदी से भी नीचे जा रही है। इन हालातों में केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी प्रधानमंत्री सिंचाई योजना वास्तव में सकारात्मक पहल कही जानी चाहिये। दरअसल यह योजना यदि सिंचाई संसाधनों के विकास की विफलताओं के पुराने अनुभवों से सीखते हुए आगे बढ़ती है तो और भी ज्यादा सार्थक हो सकती है। इस योजना के तीन प्राथमिक उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं- पहला हर खेत को पानी पहुंचाते हुए कृषि योग्य क्षेत्र का विस्तार, दूसरा खेतों में पानी के उपयोग की दक्षता को बढ़ाना जिससे कि पानी की बर्बादी को रोका जा सके, और तीसरा सिंचाई और पानी की बचत के लिये नई तकनीकों को अपनाना, उनका विकास करना तथा उन्हें किसानों तक पहुंचाना। यह सभी जानते हैं कि हमारी वर्तमान सिंचाई व्यवस्थाएं पानी के बचत की अवधारणा से रिक्त हैं। यही कारण है कि देश के प्रमुख कृषि इलाके भूमिगत जल दोहन का दंश झेलने को आज विवश हैं और इन इलाको में भूजल स्तर में भारी गिरावट आयी है। इस योजना का निवेश पहलू भी पुरानी योजनाओं से भिन्न है। यह निवेश में एकरूपता को प्रोत्साहित करता है ताकि सभी क्षेत्रों में सिंचाई व्यवस्थाओं को समान रूप से विकसित और स्थापित किया जा सके। योजना के क्रियान्वयन हेतु 50 हजार करोड़ रुपये प्राविधानित हैं। हालांकि सिंचाई सुविधाओं की मौजूदा लुंजपुंज स्थितियों के मद्देनजर इतनी राशि काफी नहीं होगी, परंतु इसमें जरूरत के अनुसार बढ़ोत्तरी करने की मंशा केंद्र सरकार ने जतायी है। योजना के क्रियान्वयन का एक खास पहलू नदियों को जोड़ने को लेकर है। नदी जोड़ो परियोजना को लेकर हालांकि काफी मतभेद हैं परंतु देश में बाढ़ की विभीषिकाओं के परिप्रेक्ष्य में यह योजना नीतिकारों के एक वर्ग द्वारा बहुत हद तक समर्थित रही है।

जलाशयों के निर्माण और विभिन्न पुराने जलाशयों के पुनर्संभरण के प्रयासों को भी इस योजना में शामिल किया गया है। पर्वतीय क्षेत्रों और पूर्वोत्तर के राज्यों हेतु इस योजना के अंतर्गत 90 फीसदी केंद्रीय अनुदान की व्यवस्था की गयी है, मात्र 10 फीसदी ही इन राज्यों को खर्च करना होगा। यदि राज्य खर्च नहीं भी कर पायेंगे तो उस दशा में योजना को स्थगित नहीं किया जायेगा, इस प्रकार की व्यवस्था इस योजना में प्राविधानित की गयी है। योजना की व्यापकता को देखते हुए दूसरी हरित क्रांति या नई कृषि क्रांति की सफलता की आशा की जा सकती है। वास्तव में किसी भी प्रकार की कृषि क्रांति संपूर्ण सिंचाई व्यवस्था के बगैर संभव हो सकती है, इसकी कल्पना करना भी बेमानी होगा। सिंचाई व्यवस्थाओं का विस्तार और जल संरक्षण (जलसंवर्धन) योजनाएं तथा सिंचाई के पारंपरिक तौर-तरीके यदि साथ-साथ क्रियान्वित होंगे तो परिणाम सकारात्मक होने के साथ-साथ संसाधनों का दुरुपयोग भी नहीं होगा जैसा कि भू-जल संवर्धन के मामले में हम आज भोग रहे हैं। ●

'किसान ड्रोन' ने बदली किसान की किस्मत

ड्रोन एक एकड़ में केवल आधा घंटे में दवा का छिड़काव कर देता है, जबकि यह काम दो मजदूर दिनभर में कर पाते हैं।

एक युवा किसान ने अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय देते हुए अपनी जरूरत के लिए 'किसान ड्रोन' का आविष्कार किया है। छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर के किसान दीपक ने अपनी खोजी प्रवृत्ति से गाड़ियों के कलपुर्जो से एक ड्रोन बनाया है, जिसका प्रयोग खेत में दवा छिड़कने में किया जा रहा है।

बकौल दीपक यह ड्रोन एक एकड़ में केवल आधा घंटे में दवा का छिड़काव कर देता है, जबकि यह काम दो मजदूर दिनभर में कर पाते हैं। ये जुगाड़ टेक्नॉलाजी रमेश चावड़ा के बेटे राहुल की देन है। वे पिछले 15 साल से किसानी कर रहे हैं। आमतौर पर मानसून के सीजन में मजदूर नहीं मिलते और मिलते भी हैं तो उनका रेट बहुत ज्यादा होता है। राजधानी के हरदी गांव (बेरला रोड) में उनका 25 एकड़ का फार्महाउस है। इतने बड़े क्षेत्र में बड़ी संख्या में मजदूरों की जरूरत पड़ती थी। आखिरकार उन्होंने ड्रोन बनाकर अपनी जरूरत पूरी की।

राहुल ने टीवी और इंटरनेट पर ड्रोन के बारे में जानकारी जुटाई। बीए पास राहुल ने विदेशों से ड्रोन के पार्ट्स मंगवाने के लिए अपने दोस्त से अंग्रेजी सीखी। उन्होंने जापान, चीन और अमेरिका से ड्रोन के पार्ट्स मंगवाए और उसे एसेंबल्ड किया। राहुल के पास तीन ड्रोन हैं। इसमें से दो उन्होंने खुद ही बनाए हैं। पहला ड्रोन दो लाख की लागत से बनाया। वे ड्रोन को आसानी से बैग या सूटकेस में लेकर जा सकते हैं। ये फोल्डिंग वाला ड्रोन है जिसमें गाड़ियों के पार्ट्स इस्तेमाल किये गये हैं। उनके इस प्रयोग से खेत में लाल भाजी और केले की फसल लहलहाती नजर आ रही है। ●

अगले कुछ महीनों में देश के प्रत्येक स्कूलों में शौचालय की उपलब्धता के अलावा इस वर्ष 14 जुलाई से 25 सितंबर तक महाराष्ट्र के नासिक में गोदावरी नदी के तट पर प्रत्येक 12 साल पर आयोजित होने वाले कुम्भ मेले में सफाई सुनिश्चित करना भी सरकार के लिए बड़ी चुनौती होगी।

सभी स्कूलों में शौचालय
सरकार की अग्निपरीक्षा

■ **कृषि चौपाल**

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के लाल किले की प्राचीर से देश को दूसरी बार संबोधित करने में लगभग डेढ़ माह बाकी हैं, जहां से पिछले वर्ष देशवासियों से साल में कम से कम एक स्कूल में सफाई करने के आग्रह के साथ महत्वाकांक्षी कार्यक्रम 'स्वच्छ भारत अभियान' की घोषणा करते हुए उन्होंने वादा किया था कि देश के सभी स्कूलों में शौचालय का निर्माण कराया जाएगा और वे अपने इस वादे को कैसे पूरा करेंगे इस पर सब की नजरें टिकी हैं।

श्री मोदी ने समाचार एजेंसी यूनीवार्ता को हाल में दिये साक्षात्कार में कहा कि स्वच्छ भारत अभियान शुरू हो चुका है और अब स्वच्छता तथा स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव में देश के गरीबों की काम करने की क्षमता प्रभावित नहीं होगी। हमने सभी स्कूलों में शौचालय बनवाने के लक्ष्य के साथ इस अभियान का आगाज कर दिया है, जिसे अगले कुछ महीनों में पूरा कर लिया जाएगा। उन्होंने कहा, ''मुझे पूरा विश्वास है कि अगर देश का प्रत्येक नागरिक स्वच्छ भारत अभियान का भागीदार बनने की ठान ले तो स्वच्छता खुद ब खुद उनके आस-पास और पूरे समाज में दिखने लगेगी।''

प्रधानमंत्री ने लोगों की समान भागीदारी और उत्तरदायित्व के लक्ष्य के साथ राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली के राजपथ पर गत वर्ष दो अक्टूबर को स्वच्छ भारत अभियान की शुरुआत की थी। शहर की स्वच्छता के लिए कुछ नहीं करने वाले सामाजिक संगठनों की इसमें भागीदारी बढ़ी है और अब कई समूह सार्वजनिक पार्कों में सफाई करते दिखने लगे हैं। वर्ष 2019 तक देश के हजारों शहरों को स्वच्छ बनाने के लक्ष्य के साथ शुरू किये गए इस अभियान को पूरा करने में 66009 करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान है जिसमें केंद्र की हिस्सेदारी 14643 करोड़ रुपये की होगी।

आधिकारिक सूत्रों के मुताबिक अभियान का लक्ष्य 1.04 करोड़ घरों में शौचालय बनवाने, 2.52 लाख सामुदायिक और 2.54 लाख सार्वजनिक शौचालयों के निर्माण के साथ ही शहरी क्षेत्रों में रहने वाले 30 करोड़ लोगों को अपशिष्ट प्रबंधन में सहयोग करना शामिल है। वर्ष 2014-15 में 28 राज्यों व केंद्रशासित प्रदेशों को इसके लिए 800 करोड़ रुपये उपलब्ध कराये गए हैं। इस दौरान 12 हजार सामुदायिक शौचालयों के अलावा दो लाख से अधिक घरों में शौचालय बनाये जा चुके हैं।

सरकारी सूत्रों के अनुसार, 390 शहरों में ठोस कचरे का शत-प्रतिशत निपटान हुआ है। सरकार की ओर से किसी सार्वजनिक सभा के पहले और बाद उस स्थल की सफाई सुनिश्चित करने के उद्देश्य से स्टैंडर्ड ऑपरेटिंग प्रोसीजर (एसपीओ) जारी किया गया है।

श्री मोदी ने 15 अगस्त 2014 को एक साल के भीतर सभी स्कूलों में शौचालय निर्माण की अपील की थी। उन्होंने कहा था कि वह चाहते हैं कि देश के सभी स्कूलों में खासकर छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग शौचालय हों। इस लक्ष्य को राज्य सरकारों की मदद से पूरा किया जाना चाहिए ताकि एक साल बाद 15 अगस्त 2015 को सभी यह कहने की स्थिति में हों कि देश में एक भी स्कूल ऐसा नहीं बचा, जिनमें शौचालय नहीं है।

अगले कुछ महीनों में देश के प्रत्येक स्कूलों में शौचालय की उपलब्धता के अलावा इस वर्ष 14 जुलाई से 25 सितंबर तक महाराष्ट्र के नासिक में गोदावरी नदी के तट पर प्रत्येक 12 साल पर आयोजित होने वाले कुम्भ मेले में सफाई सुनिश्चित करना भी सरकार के लिए बड़ी चुनौती होगी।

प्रधानमंत्री ने हाल ही में इस कार्यक्रम की समीक्षा बैठक में अधिकारियों को कुम्भ मेला और जगन्नाथ यात्रा के दौरान धार्मिक गुरुओं को पर्याप्त स्वच्छता उपलब्ध कराने के निर्देश दिये हैं। वर्ष 2016 में मध्य प्रदेश के उज्जैन में शिप्रा

नदी के तट पर भी कुम्भ मेले का आयोजन होना है। श्री मोदी के निर्देश के बाद से अधिकारी नासिक कुम्भ में गोदावरी में डुबकी लगाने के लिए पहुंचने वाले करोड़ों श्रद्धालुओं को पर्याप्त स्वच्छता उपलब्ध कराने के कार्य में जोर-शोर से जुट गए हैं।

स्वच्छ भारत अभियान ने पूरी दुनिया में एक हलचल सी मचा दी है, जिससे इस शब्द के अंग्रेजी शब्दकोश में शामिल किये जाने की संभावना काफी प्रबल हो गयी है। ठीक वैसे ही जैसे वर्षों पहले हिंदी भाषा के शब्द लूट, बंद और तूफान को अंग्रेजी शब्दकोष में शामिल किया गया था। इस अभियान के जोर पकड़ने से 'स्वच्छ' शब्द का इस्तेमाल काफी तेजी से बढ़ा है और इसने अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का भी ध्यान खासा आकर्षित किया है।

आश्चर्य है कि सामान्य अर्थ में स्वच्छ का मतलब स्वास्थ्यकर होता है लेकिन सरकार के विरोधी खेमे में इसे अस्वास्थ्यकर के अर्थ में स्वीकार किया गया है। हालांकि उनका यह दावा सस्ती लोकप्रियता बटोरने के हथकंडे के अलावा और कुछ नहीं है। वह यहीं तक नहीं रुकते बल्कि इस अभियान की आलोचना में एक कदम और बढ़ाते हुए राष्ट्रीय राजधानी के लुटियंस जोन की पेशाब से भींगी दीवारों को भी रेखांकित करते हैं। ऐसे में देश के सुदूरवर्ती इलाकों के बारे में क्या कहा जाए।

स्वच्छ भारत अभियान के प्रचार-प्रसार के लिए देश भर में इश्तहार, पोस्टर और स्टिकर चिपकाए गये लेकिन लोगों की निजी भागीदारी के बिना इसे पूरा नहीं किया जा सकता। प्रधानमंत्री ने इस अभियान के लिए विभिन्न चैनलों के माध्यम से देशवासियों को संबोधित करते हुए कहा है कि यह अभियान राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सपनों को साकार करने का एक बड़ा अवसर है और इसे पूरा करना 2019 में उनकी 150वीं जयंती पर उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

इसके लिए विभिन्न स्तरों पर प्रयास किये जा रहे हैं। अभी हाल ही में गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने कहा है कि यह अभियान केवल आस-पास की गंदगी की सफाई के लिए नहीं है बल्कि यह समाज के वर्षों पुराने कोढ़ 'छुआछूत' को समाप्त करने का भी अभियान है।

बुद्धिजीवियों का मानना है कि इस अभियान की सफलता सरकारी अधिकारियों के सार्वजनिक स्थलों पर शौचालयों के निर्माण में युद्धस्तरीय प्रयासों में निहित है। उन्होंने कहा, ''देश के आलीशान लुटियंस जोन में इंडियन न्यूजपेपर सोसाइटी (आईएनएस) परिसर के पास बस पकड़ने के लिए लोग घंटों इंतजार करते हैं लेकिन शौचालय के अभाव में पेशाब करने के

शौचालयों के निर्माण और उनकी मरम्मत जैसे कार्यों में सार्वजनिक उपक्रमों– कोल इंडिया लिमिटेड, एनटीपीसी, आरईसी, पावर फाइनेंस कॉर्पोरेशन, पावर ग्रिड कॉर्पोरेशन, एनएचपीसी और ओएनजीसी के साथ ही निजी क्षेत्र की कंपनियों की भागीदारी भी काफी तेजी से बढ़ रही है।

लिए वह आस-पास झाड़ियां ढूंढते हैं। बस स्टैंड के सार्वजनिक शौचालय की स्थिति इतनी खराब है कि वहां पेशाब करने पर संक्रमण फैलने का खतरा बढ़ जाता है। इसके लिए अधिकारियों के आधे-अधूरे प्रयास को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। यहां तक कि नयी दिल्ली स्टेशन के प्लेटफॉर्म संख्या एक पर तो शौचालय है लेकिन अन्य प्लेटफॉर्मो पर इन समस्याओं का समाधान किये बिना स्वच्छ भारत अभियान का लक्ष्य पूरा नहीं किया जा सकता है।''

देश में कई ऐसे मामले सामने आये हैं, जिसने इस अभियान को गति दी है। बिहार के महाराजगंज की प्रियंका भारती का मामला समाचार पत्रों की सुर्खी बन गया और स्वच्छ भारत अभियान के टीवी विज्ञापन में भी फिल्म अभिनेत्री विद्या बालन उनका उदाहरण देती दिखती हैं। उन्नीस वर्षीय भारती ने शौचालय के अभाव में अपने पति का घर छोड़ दिया। अखबारों ने उसके हवाले से लिखा, ''मैं तब तक अन्न-जल ग्रहण नहीं करूंगी जब तक कि मुझे घर में शौचालय उपलब्ध नहीं कराया जाएगा। रात के समय शौच के लिए बाहर जाना काफी खतरनाक होता है। इसका मेरे स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है और इसलिए मैंने अपने ससुराल का विरोध किया है।''

समाज ने सुश्री भारती पर ससुराल वापस लौटने का काफी दबाव बनाया लेकिन उनके इरादे नहीं बदले। एक सामाजिक संगठन द्वारा वहां शौचालय बनवाने के बाद वह वापस लौटीं। अब वह इस अभियान का प्रतीक बन चुकी हैं और वह स्वच्छता और शौचालयों के निर्माण को बढ़ावा देने के प्रचार-प्रसार के अभियान से जुड़ गयी हैं।

इस अभियान में केवल प्रियंका भारती ही उदाहरण नहीं है। कर्नाटक के बल्लारी तालुका में एक 32 वर्षीय व्यक्ति ने पिछले महीने अपनी शादी के कार्ड पर 'स्वच्छ भारत अभियान' छपवाया। इस कार्ड ने स्वस्थ जीवन के लिए लोगों को घरों में शौचालयों के निर्माण के लिए प्रेरित किया है। इसके अलावा उत्तर प्रदेश सरकार ने 300 सरकारी इंटर कॉलेजों में छात्राओं के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए सैनिटरी नैपकिन को नष्ट करने वाले प्रस्ताव को मंजूरी दी है। सूत्रों के मुताबिक यह राज्य सरकार के 73 जिलों के कॉलेजों में लाखों रुपये की शौचालय परियोजना का हिस्सा है।

श्री मोदी ने अभी हाल ही में प्रधानमंत्री कार्यालय, नीति आयोग, शहरी विकास, स्वच्छ जल आपूर्ति एवं स्वच्छता मंत्रालय के अधिकारियों के साथ इस अभियान की प्रगति की समीक्षा की है। उन्होंने सभी राज्यों में शौचालय निर्माण की प्रगति पर लोगों की ताजा प्रतिक्रिया मांगी और व्यापक समीक्षा के बाद प्रधानमंत्री ने संबद्ध अधिकारियों को विशेषकर शौचालय निर्माण में पीछे रहने वाले राज्यों से सामंजस्य बिठाने का निर्देश दिया है।

उन्होंने अधिकारियों से कहा कि 'नमामि गंगे' कार्यक्रम के तहत गंगा नदी के तट पर शौचालयों का निर्माण उनकी सर्वोच्च प्राथमिकताओं में शामिल होना चाहिए। इस कार्य को बढ़ावा देने के लिए पुरस्कार की घोषणा भी की जानी चाहिए। उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में जागरुकता लाने के लिए छात्रों के बीच क्विज प्रतियोगिता आयोजित करने की भी सलाह दी है।

शौचालयों के निर्माण और उनकी मरम्मत जैसे कार्यों में सार्वजनिक उपक्रमों- कोल इंडिया लिमिटेड, एनटीपीसी, आरईसी, पावर फाइनेंस कॉर्पोरेशन, पावर ग्रिड कॉर्पोरेशन, एनएचपीसी और ओएनजीसी के साथ ही निजी क्षेत्र की कंपनियों की भागीदारी भी काफी तेजी से बढ़ रही है। इसमें योगदान देने के लिए वित्त मंत्रालय के अधीन 'स्वच्छ भारत कोष' भी बनाया गया है। इस कोष का इस्तेमाल 'स्वच्छ विद्यालय' कार्यक्रम में किया जाएगा।

रेल मंत्रालय ने भी ट्रेन की कोच में कीड़े, मच्छर और तिलचट्टों के साथ ही शौचालय की गंदगी के बारे में यात्रियों की शिकायतों को अपनी प्राथमिकताओं में शामिल किया है। अधिकारियों का कहना है कि चालू वित्त वर्ष से ही सभी नये कोचों के साथ ही गैर एसी कोचों में डस्टबिन उपलब्ध कराने की योजना है। पुराने रेल डिब्बों में भी इसकी व्यवस्था की जाएगी।

उनके अनुसार मंत्रालय स्वच्छ पर्यावरण और साफ-सफाई के लिए अलग से निदेशालय बनाने और स्वच्छता के लिए एकीकृत नीति बनाने पर भी गंभीरता से काम कर रहा है। रेल पटरियों को स्वच्छ रखने के लिए डिब्बों में जैव शौचालय लगाए गए है। इस वर्ष मार्च तक ऐसे 17000 शौचालय बनाये जा चुके हैं और चालू वित्त वर्ष में ट्रेनों में 17 हजार और जैव शौचालयों का निर्माण किया जाएगा। ●

मछली पालन और एक्वाकल्चर क्षेत्र में अवसर

मात्स्यिकी और एक्वाकल्चर स्नातकों के लिए विभिन्न विशेषताओं के साथ रोजगार के अवसर उपलब्ध हैं जिनमें राज्य और केंद्र सरकार की एजेंसियां, अकादमिक संस्थान तथा मछली फार्म शामिल हैं। सरकारी एजेंसियां और उद्योग संगठन एक्वाकल्चर कृषक, सीपदार मछली कृषक, हैचरी तकनीशियन, जैविकीय विज्ञान तकनीशियन, मछली अनुसंधान सहायक आदि जैसे पदों पर भर्ती करते हैं।

■ डॉ. अरुण एस. निनावे

मछली पालन कृषिक्षेत्र के तहत एक महत्त्वपूर्ण व्यावसायिक क्षेत्र है, जो लाखों लोगों के लिए प्रोटीन के प्रमुख स्रोत के रूप में उपलब्ध है। राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद में इसका करीब 1.4 प्रतिशत और एक्वाकल्चर क्षेत्र में कुल मिलाकर जीडीपी का 4.5 प्रतिशत योगदान है। व्यापक संदर्भ में इसमें अंतर्देशीय और समुद्री, एक्वाकल्चर, सामग्रियां, नौवहन, महासागर विज्ञान, मछलीघर प्रबंधन, मत्स्य प्रजनन, प्रसंस्करण, समुद्री खाद्य पदार्थों का निर्यात और आयात, विशेष उत्पादन और अन्य उत्पाद, अनुसंधान तथा संबद्ध गतिविधियां शामिल होती हैं। भारत दुनिया में चौथा सबसे बड़ा मछली उत्पादक और अंतर्देशीय मछली का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। जैव विविधता से परिपूर्ण भारत के लंबे तटीय क्षेत्र के कारण यहां मछलियों की एक्वा-फार्मिंग और मनोरंजन अथवा उपभोग के लिए क्रसटेशियन तथा पानी में पैदा होने वाले पौधे प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। इस पर गरीब मछुआरा समुदाय का एक बड़ा हिस्सा आजीविका के लिए निर्भर होने के कारण यह और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि ये उनकी आजीविका का मुख्य स्रोत है।

यह अत्यधिक क्षमतावान क्षेत्र है जिसमें एक्वाकल्चर और मेरीकल्चर फार्मिंग व्यवहारों के जरिये मछली पालन के विकास के व्यापक अवसर मौजूद हैं। पिछले छह दशकों के दौरान इस क्षेत्र को अत्यधिक अपेक्षित तकनीक, मानव शक्ति और सक्षम विस्तार कार्मिकों और प्रभावी प्रौद्योगिकी अंतरण के साथ विकसित किया गया है। अनुसंधान और विकास ने जलजीव विज्ञानियों, फार्म प्रबंधकों, निर्यातकों, व्यापारियों, प्रजनकों और आधुनिक मछुआरों को शामिल करते हुए इस क्षेत्र के उत्पादन स्तर में सुधार और खेती के लिए मत्स्य बीज, उच्च उत्पादक नस्ल और दवाई की उपलब्धता में सराहनीय सहयोग दिया है। अत्यधिक लाभप्रद क्षेत्र होने के कारण इसे मछली पालन और जलीय विज्ञानों की विभिन्न शाखाओं में रोजगार सृजन और कॅरिअर के अवसरों का प्रमुख क्षेत्र माना जाता है।

मत्स्य पालन विज्ञान में प्रवेश हेतु पात्रता

मत्स्य पालन क्षेत्र में प्रवेश पाने के वास्ते मात्स्यिकी स्नातक बनने के इच्छुक व्यक्तियों को राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के मात्स्यिकी महाविद्यालयों से 4 वर्षीय डिग्री उत्तीर्ण करनी होती है। मात्स्यिकी विज्ञान में बैचलर पाठयक्रम में प्रवेश के लिए भौतिकी, रसायन विज्ञान और बायो ग्रुप रखने वाले व्यक्ति 10+2 के उपरांत आवेदन कर सकते हैं।

उम्मीदवारों को मैरिट स्कोर और सीटों की उपलब्धता के अनुसार प्रवेश प्रदान किया जाता है। राज्य के बाहर के उम्मीदवारों को विशेष कोटे

राष्ट्रीय/राज्य मात्स्यिकी संस्थान

1. केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, वर्सोवा, मुंबई, www.cif.edu.in
2. केंद्रीय खारा पानी जलजीव संस्थान, चेन्नई, www.ciba.res.in
3. राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो, लखनऊ, www.nbfgr.res.in
4. केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी एवं इंजीनियरिंग प्रशिक्षण संस्थान कोच्चि, www.cifnet.nic.in
5. तमिलनाडू फिशरीज यूनिवर्सिटी, नागपट्टिनम, तमिलनाडु, www.tnfu.org.in
6. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल, www.iitkgp.ac.in
7. आंध्र विश्वविद्यालय, तेलीबाग, वाल्टेर, आंध्र प्रदेश, www.andhrauniversity.edu.in
8. गोआ विश्वविद्यालय, www.unigoa.ac.in

राज्य कृषि/पशुचिकित्सा विश्वविद्यालयों के अधीन मात्स्यिकी माहविद्यालय

1. कॉलेज ऑफ फिशरीज, शिरगांव, रत्नागिरी, www.dbskkv.org
2. मात्स्यिकी विज्ञान माहविद्यालय, तेलंगखेडी, नागपुर, http:cofsngp.org
3. कॉलेज ऑफ फिशरीज मंगलौर, कर्नाटक, www.kvafsu.kar.nic.in
4. कॉलेज ऑफ फिशरीज साइंस, पंतनगर, उत्तर प्रदेश, www.gbpuat.ac.in
5. पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना, www.pau.edu
6. इंस्टीटड्यूट ऑफ फिशरीज टेक्नोलॉजी, थिरूवल्लूर, चेन्नई, http:iftponneri&tnfu.org
7. कॉलेज ऑफ फिशरीज साइंस, कुलिया, पश्चिम बंगाल, www.wbuafscl.ac.in
8. कॉलेज ऑफ फिशरीज, वेरावल, गुजरात, http:www.gsauca.in

की अनुमति होती है जिन्होंने कृषि अनुसंधान परिषद की प्रवेश परीक्षा उत्तीर्ण की होती है और अध्येतावृत्ति भी प्राप्त कर रहे होते हैं। इसमें जम्मू एवं कश्मीर, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश और नागालैंड के लिए विशेष आरक्षित सीटें होती हैं। मात्स्यिकी विज्ञान स्नातक पाठयक्रम में अंतर्देशीय एक्वाकल्चर, फ्रेशवाटर एक्वाकल्चर, मेरीकल्चर, औद्योगिक मत्स्यपालन, मछली प्रसंस्करण और फसल उपरांत प्रौद्योगिकी, मत्स्य पोषण, पैथोलॉजी, पर्यावरण, पारिस्थितिकी और विस्तार जैसे विषय शामिल होते हैं। पाठ्यक्रम में व्यवहारिक अनुभव भी शामिल होता है, जैसे कि समुद्री नौकाओं पर मछली पकड़ना और डाटा संग्रह तथा प्रसंस्करण संयंत्रों में मात्स्यिकी आदि। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के शैक्षणिक कार्यक्रम के जरिये ग्रामीण कृषि कार्यानुभव (आरएडब्ल्यू) के अधीन फार्म अध्ययनों से छात्रों को एक्वा-फार्मों, हैचरी, मत्स्य प्रसंस्करण इकाइयों, मूल्यवर्द्धन, संसाधन प्रबंधन आदि पर व्यावहारिक ज्ञान हासिल करने में सहायता मिलती है।

उच्चतर शिक्षा

मत्स्य विज्ञान में बैचलर डिग्री पूर्ण करने के उपरांत उम्मीदवार मत्स्य विज्ञान में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम को चुन सकते हैं जिसके लिए भारत में केंद्रीय संस्थानों में प्रवेश लेने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा आयोजित आठ मात्स्यिकी संस्थान हैं, जिनके नाम हैं- सीआईएफई, सीआईबीए, सीआईएफए, सीएमएफआरआई, सीआईएफटी, सीआईएफआरआई, एनबीएफजीआर और डीसीएफआर। ये संस्थान अपने अनुसंधान कार्यक्रम के अलावा मछली पकड़ने, खेती, मूल्य विस्तार प्रसंस्करण, संग्रह, संरक्षण और जैव विविधता के क्षेत्र में कार्यरत हैं। इन संस्थानों में छात्र स्नातकोत्तर और पीएचडी स्तर तक की विशेषीकृत शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। इनके अलावा स्वतंत्र पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विद्यालयों के अधीन करीब 18 मात्स्यिकी महाविद्यालय और राज्य कृषि विश्वविद्यालय भी मात्स्यिकी विज्ञान में बैचलर तथा स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम संचालित करते हैं। अवसंरचना और अत्याधुनिक सुविधाओं की उपलब्धता के आधार पर मात्स्यिकी महाविद्यालय अपनी व्यवस्था के अधीन पीएचडी पाठ्यक्रम संचालित कर रहे हैं। कई विद्यालयों के जरिये जलजीव विज्ञान और मात्स्यिकी में मास्टर और पीएचडी कार्यक्रम उपलब्ध है। छात्र अपनी रुचि के अनुरूप अनुसंधान का विषयक्षेत्र चुन सकते है, जैसे कि मत्स्य पोषण, जल गुणवत्ता, जलजीव विज्ञान इंजीनियरिंग, मछली आनुवंशिकी, अंडा उत्पादन और मत्स्य पैथोलॉजी। ज्यादातर स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के लिए शोधपत्र अपेक्षित होते हैं जबकि पीएचडी छात्रों के लिए मुख्यत: एक पूर्ण शोध-निबंध अपेक्षित होता है। मछली पालन और प्रजनन, एकीकृत मत्स्य-पशुधन फार्मिंग, मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन और पोषण, सघन मत्स्य फार्मिंग तथा पर्यावरण प्रबंधन सहित फसल उपरांत और प्रसंस्करण के विकास जैसे क्षेत्रों में शोध गतिविधियां संचालित की जाती हैं।

मात्स्यिकी स्नातक और उच्चतर अर्हता रखने वाले व्यक्तियों को आकर्षक वेतन और लाभों के साथ अच्छे रोजगार अवसर प्राप्त होते हैं।

फार्म तथा कौशल आधारित प्रशिक्षण

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीन कृषि विज्ञान केंद्र अपने संस्थानों के सहयोग से प्रशिक्षुओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करते हैं और एनसीईआरटी से सक्रिय सहयोग से 10+2 स्तर पर मत्स्य पालन को व्यावसायिक पाठयक्रम के तौर पर शामिल करते हैं। तटीय राज्यों में मछुआरा बहुल गांवों में मछुआरों के लिए नियमित कौशल विकास कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं। इंस्टीटड्यूट ऑफ फिशरीज नोटिकल एंड इंजीनियरिंग ट्रेनिंग (सीआईएफएनईटी) द्वारा भी गहरे समुद्र में मछली पकड़ने तथा नौवाहन विषय पर प्रशिक्षण संचालित किये जाते हैं। भारत में विभिन्न एजेंसियों द्वारा स्कूबा डाइविंग में लघु अवधि प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं जिनसे गहरे समुद्र में मछली पकड़ने और संसाधन उपयोग, मानचित्रीकरण तथा मूल्यांकन के क्षेत्र में रोजगार सृजन में सहायता मिलती है।

रोजगार अवसर

मात्स्यिकी और एक्वाकल्चर स्नातकों के लिए विभिन्न विशेषताओं के साथ रोजगार के अवसर उपलब्ध हैं जिनमें राज्य और केंद्र सरकार की एजेंसियां, अकादमिक संस्थान तथा मछली फार्म शामिल हैं। सरकारी एजेंसियां और उद्योग संगठन एक्वाकल्चर कृषक, सीपदार मछली कृषक, हैचरी तकनीशियन, जैविकीय विज्ञान तकनीशियन, मछली अनुसंधान सहायक आदि जैसे पदों पर भर्ती करते हैं। एक्वाकल्चर से लेकर मछलियों की समुद्री खेती, सीपदार मछली और समुद्री उत्पदों के क्षेत्र में सार्वजनिक और निजी दोनों ही क्षेत्रों में रोजगार के बहुत से विकल्प मौजूद हैं। प्राथमिक स्तर के एक्वाकल्चर रोजगारों के लिए हाई स्कूल डिप्लोमा अथवा एक्वाकल्चर एवं मात्स्यिकी में अंडर-ग्रेजुएट डिग्री अपेक्षित होती है परंतु अधिक उन्नत पदों के लिए स्नातकोत्तर अथवा पीएचडी डिग्री की आवश्यकता होती है। राज्य सरकारों में मछली पालन विभाग में मात्स्यिकी स्नातकों के लिए सहायक मात्स्यिकी विकास अधिकारी तथा मात्स्यिकी विकास अधिकारी और जिला मात्स्यिकी विकास अधिकारी के पद उपलब्ध होते हैं। एक्वाकल्चर फार्मिंग में उच्च विद्यालय डिप्लोमा धारकों के लिए भी रोजगार के अवसर उपलब्ध हैं। लेकिन इस उद्योग में नियोक्ताओं की संख्या में वृद्धि से सेकेंडरी उपरांत उम्मीदवारों को कुछ पदों के लिए रोजगार में वरीयता दी जाती है। बहुत से विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में अनुसंधान और शिक्षण हेतु कुछेक एक्वाकल्चर रोजगारों के लिए स्नातक स्तरीय शिक्षा और उच्चतर शिक्षा कार्यक्रम अपेक्षित होते हैं।

विभिन्न प्रकार के एक्वाकल्चर रोजगारों के लिए अध्ययन के अपेक्षित कौशल और ज्ञान उपलब्ध करवाने के लिए विदेशो में मात्स्यिकी और एक्वाकल्चर में एसोसिएट और बैचलर डिग्री कार्यक्रम उपलब्ध करवाये जाते हैं। द्विवर्षीय कार्यक्रमों में छात्र स्नातक के उपरांत रोजगार बाजार में प्रवेश के लिए अनुप्रयुक्त विज्ञान डिग्री के एसोसिएट के तौर पर कार्यक्रम में शामिल हो सकते हैं और इसे चार वर्षीय अकादमिक कार्यक्रम में तब्दील करने के लिए विज्ञान में फैलोशिप हासिल कर सकते हैं। अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, जापान, चीन और यूरोपीय देशों आदि में मात्स्यिकी में उच्चतर शिक्षा के लिए संभावना के अलावा, खाड़ी और अफ्रीकी देशों में भी एक्वाकल्चर तथा प्रसंस्करण क्षेत्रों में मात्स्यिकी विशेषज्ञों की मांग है। विदेशों में एक्वाकल्चर, निर्यात और आयात के क्षेत्र में व्यापार संचालित करने वाले बहुत से मात्स्यिकी स्नातक मौजूद हैं।

मात्स्यिकी स्नातक और उच्चतर अर्हता रखने वाले व्यक्तियों को आकर्षक वेतन और लाभों के साथ अच्छे रोजगार अवसर प्राप्त होते हैं। सरकारी संस्थानों में उन्हें सहायक निदेशक, अनुसंधान सहायक और मात्स्यिकी निरीक्षक आदि के तौर पर नियुक्त किया जाता है। सरकारी क्षेत्र में निजी क्षेत्र की तुलना में वेतन थोड़ा कम जरूर होता है लेकिन वह स्थाई रोजगार होता है। निजी क्षेत्र में मात्स्यिकी विज्ञान में स्नातकोत्तर के लिए गुणवत्ता नियंत्रण अधिकारी, मत्स्य प्रोसेसर, एक्वाकल्चररिस्ट, फार्म सहायक, प्रबंधक आदि के अनेक अवसर उपलबध होते हैं। इन्हें उम्मीदवार की रोजगार प्रकृति और विशेषज्ञता के अनुरूप भिन्न-भिन्न वेतन प्रदान किया जाता है। ●

मूंग की जैविक खेती के लिए जरूरी जानकारी

■ मोहन चंद्र पाण्डे

जलवायु की दृष्टि से मूंग की फसल सभी मौसमों में उगाई जाती है। उत्तरी भारत में इसे वर्षा (खरीफ) तथा ग्रीष्म ऋतु में उगाते हैं। दक्षिणी भारत में मूंग को रबी मौसम में उगाते हैं। इसकी फसल के लिए अधिक वर्षा हानिकारक होती है। ऐसे क्षेत्रों में जहां 60-75 सेमी तक वार्षिक वर्षा होती है मूंग की खेती के लिए उपयुक्त हैं पर, मूंग की फसल के लिए गर्म जलवायु की आवश्यकता पड़ती है। मूंग की खेती समुद्र तल से 2000 मीटर की ऊंचाई तक की जा सकती है। पौधों पर फलियां आते समय तथा फलियां पकते समय शुष्क मौसम तथा उच्च तापक्रम अधिक लाभप्रद होता है।

भूमि

भूमि का चुनाव:- इसकी खेती विभिन्न प्रकार की मृदाओं जैसे हल्की से भारी मिट्टी पर की जाती है, उत्तरी भारत में गहरी उचित जल निकास वाली दोमट व दक्षिणी भारत की लाल मृदाएं उपयुक्त हैं जिनमे दोमट मिट्टी अच्छी मानी जाती है लेकिन सिंचाई का अच्छा प्रबंध होना आवश्यक है।

भूमि की तैयारी:- रबी की फसल काटने के तुरंत बाद पलेवा करना चाहिए, खेत में ओट आने पर एक जुताई तथा बाद की जुताई मिट्टी पलटने वाले तवेदार हैरो तथा दूसरी जुताई देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करके भलीभांति पाटा लगाना चाहिए ताकि खेत समतल हो जाए और अधिक नमी बनी रहे।

प्रजातियां

टाइप-1:- फसल अवधि 60-65 दिन, पौधे सीधे बढ़ने वाले, फली लम्बी, दाने हरे रंग के व मध्यम आकार के, हरी खाद एवं दाने के लिए प्रयोग करते हैं। उपज क्षमता 6-7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, गर्मियों में बोवाई के लिए उपयुक्त।

44 टाइप:- फसल अवधि 60-70 दिन, हरी खाद के लिए उपयुक्त, ग्रीष्म व वर्षा ऋतु के लिए उत्तम, पौधा अर्ध फैलने वाला, पीला मोजैक वायरस रोग लगता है। संपूर्ण भारत वर्ष के लिए उपयुक्त, उपज क्षमता 6-8 क्विंटल प्रति हैक्टेयर।

51 टाइप:- फसल अवधि 75-80 दिन, पौधा सीधा बढ़ने वाला व लंबा, दाना मध्यम आकार का एवं चमकीला हरे रंग का, उपज क्षमता 6-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, देश के मैदानी क्षेत्रों में मुख्यत: खरीफ में मिलवां खेती के लिए उत्तम।

851-के:- फसल अवधि 60-65 दिन, पौधा अर्ध फैलने वाला, फलियां लम्बी, उपज क्षमता 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर इस किस्म की फलियां एक ही समय में पकती हैं, उत्तर तथा दक्षिणी भारत के लिए उत्तम।

पूसा वैसाखी:- फसल 60-70 दिन अवधि, पौधे अर्ध फैले वाले, दाने का आकार मध्यम उत्तरी भारत में अंतरवर्ती फसल के लिए सबसे उपयुक्त फसल, फलियां लम्बी, उपज 8-10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर।

16 पीएस:- फसल अवधि 60-65 दिन, पौधा सीधा बढ़ने वाला व लंबा, उपज क्षमता 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, सम्पूर्ण भारत में वर्षा तथा ग्रीष्म दोनों मौसमों के लिए उपयुक्त।

मोहिनी:- फसल अवधि 70-75 दिन, पौधा सीधा फैलने वाला तथा शाखाएं युक्त, फली में 10-12 बीज, दाने छोटे, उपज 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, पीला मोजैक वायरस व सर्कोस्पोरा लीफ स्पोट रोग के प्रति सहनशील क्षमता।

शीला:- फसल अवधि 75-80 दिन, पौधा सीधा बढ़ने वाला व लंबा, उपज क्षमता 15-20 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, पूरे उत्तर प्रदेश के मौसम के लिए उपयुक्त।

पन्त मूंग-1:- फसल अवधि 75 दिन (खरीफ) तथा 65 (जायद) दिन, दाने छोटे, उपज क्षमता 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर।

एमएल-1:- फसल अवधि 90 दिन, बीज छोटा व हरे रंग का, उपज क्षमता 8-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, पंजाब तथा हरियाणा में खेती के लिए उपयुक्त।

एमएल-5:- फसल अवधि 80-85 दिन, उपज क्षमता 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, खरीफ की फसल के लिए उपयुक्त, पौधे सीधे बढ़ने वाले तथा फलियों से लदा होता है, पीला मोजैक रोग कम लगता है।

वर्षा:- यह अगेती किस्म है, पौधा छोटा तथा झाड़ीनुमा होता है, उपज क्षमता 10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, यह किस्म हरियाणा से विकसित की गई है।

सुनैना:- फसल अवधि 60 दिन , पौधा अर्ध सीदा बढ़ने वाला, बीज चमकीला तथा हरे रंग का, उपज क्षमता 12-15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, बिहार में ग्रीष्म मौसम के लिए उपयुक्त।

45 जवाहर:- इस किस्म को हाइब्रिड 45 भी कहा जाता है, फसल 75-85 दिन अवधि, पौधा अर्ध सीधा बढ़ने वाला, उपज क्षमता 10-13 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, खरीफ के मौसम के लिए उपयुक्त।

11 कृष्णा:- अगेती किस्म फसल अवधि 65-70 दिन, ग्वालियर क्षेत्र के लिए उपयुक्त उपज क्षमता 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर।

पन्त मूंग-3:- फसल अवधि 60-70 दिन, 1000 दाने का वजन 35 ग्राम, ग्रीष्म ऋतु में खेती के लिए उपयुक्त, पीला मोजैक वायरस तथा पाउडरी मिल्ड्यू रोधक, पौधे की ऊंचाई 50-60 सेमी, 9-11 दाने प्रति फली।

पीडी-54एम:- फसल अवधि 60-65 दिन,

पीला वायरस मोजैक रोग रोधक, उपज क्षमता 12-15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर, बीज बड़ा व चमकीला हरे रंग का।

अमृत:- फसल अवधि 90 दिन, इस किस्म की खेती बिहार में खरीफ मौसम में की जाती है, पीला मोजैक वायरस रोग के प्रति सहनशील, उपज क्षमता 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर।

बीज बोवाई

बीज दर:- खरीफ मौसम में बीजदर 12-15 किग्रा प्रति हैक्टेयर प्रयोग करते हैं तथा बोवाई पंक्तियों में 25 सेमी की दूरी पर करना चाहिए। रबी तथा ग्रीष्म मौसम में मूंग के लिए बीज दर 20 किग्रा प्रति हैक्टेयर रखना चाहिए तथा बोवाई कतारों में 30 सेमी की दूरी पर करनी चाहिए।

बोवाई का समय:- खरीफ मौसम में मूंग की बोवाई मानसून आने पर जून के द्वितीय पखवाड़े से जुलाई के प्रथम पखवाड़े के मध्य करनी चाहिए। रबी मौसम में मूंग की बोवाई अक्टूबर-नवंबर में करनी चाहिए। दक्षिणी भारत में मध्य प्रदेश, तमिलनाडु व उड़ीसा में मूंग की बोवाई रबी मौसम में भी की जाती है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, पश्चिम बंगाल तथा बिहार में मूंग की खेती ग्रीष्म मौसम में की जाती है। इन राज्यों में मूंग को गन्ना, गेहूं, आलू आदि की कटाई के बाद बोते हैं। इन राज्यों में ग्रीष्म (बसंत) मौसम में मूंग की बोवाई मध्य मार्च से अप्रैल तक की जाती है।

जैविक खाद

खाद का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना श्रेयस्कर होगा। उत्तम उपज के 2 बैग भू-पॉवर 50 किग्रा 395 रुपये प्रति बैग, या लिए 2 बैग माइक्रो गोल्ड 40 किग्रा 372 रुपये प्रति बैग या 2 बैग माइक्रो फर्टी सिटी कम्पोस्ट 40 किग्रा 600 रुपये प्रति बैग, 1 बैग सुपर गोल्ड कैल्सिफर्ट 10 किग्रा 225 रुपये प्रति बैग, 2 बैग माइक्रो भू-पॉवर 10 किग्रा 425 रुपये प्रति बैग या 2 बैग सुपर गोल्ड झाइम 10 किग्रा 390 रुपये प्रति बैग तथा 2 बैग माइक्रो नीम 20 किग्रा 365 रुपये प्रति बैग सभी को अच्छी तरह से मिलाकर बोवाई करने से पहले जमीन में छिड़काव कर पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा अन्य 2-3 जुताइयां। देशी हल या कल्टीवेटर द्वारा करनी चाहिए।

सिंचाई

मूंग की ग्रीष्मकालीन फसल को 4-6 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। वर्षाकालीन फसल में सूखा पड़ने की स्थिति में आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। जब फसल पूर्ण पुष्प अवस्था पर हो तो उस समय कोई भी सिंचाई नहीं करनी चाहिए ।

खरपतवार नियंत्रण

दाने वाली फसल की निराई-गुड़ाई, बोवाई के 20-25 दिन बाद करनी आवश्यक है। दूसरी निराई-गुड़ाई बोवाई के 45 दिन बाद करनी चाहिये।

प्रमुख रोग

पीला मोजैक:- इस रोग के कारण नई पत्तियां पीली हो जाती हैं, पत्तियों की शिराओं का किनारा पीला पड़ जाता है और बाद में पूरी पत्ती ही पीली पड़ जाती है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।

चारकोल विगलन:- रोग का प्रमुख लक्षण पौधों की जड़ों तथा तनों का विगलन (सड़न) है।

वर्ण चित्ती:- इसके लक्षण पत्तियों पर प्राय: वृत्ताकार व्यास के धब्बे से प्रकट होते हैं। कभी-कभी रोगग्रस्त भागों के साथ में मिलने से बड़ा अनियमित आकार का धब्बा बन जाता है। धब्बों का रंग बैंगनी, लाल तथा भूरा होता है। फलियों पर भी इसका असर आ जाता है।

रोग नियंत्रण

बीमारी आने पर इलाज करने से अच्छा है कि बीमारी आने ही न दें, इसलिए किसान को फसल में हर 15 दिन बाद नीम पानी माइक्रो झाइम मिलाकर छिड़काव करते रहना चाहिए। अगर रोग आ ही गया है तो उस फसल को तत्काल उखाड़कर जला देना चाहिए और तत्काल हर हफ्ते नीम पानी और झाइम का छिड़काव करते रहना चाहिए जब तक फसल रोगमुक्त न हो जाए। रोगमुक्त, विषमुक्त और तंदुरुस्त बीज की बोवनी करनी चाहिए। अगर किसान ऑरगेनिक खेती कर रहा है तो उपरोक्त बीमारियां आने का चांस ही नहीं है। उपरोक्त सभी रोग बाजारवाद, रासायनीकरण, किसानों की अकर्मण्यता द्वारा पैदा किये गए हैं। अगर रोग पैदा ही नहीं होंगे तो बाजार को कौन पूछेगा इसलिए पहले रोग पैदा किया जाता है फिर उसका इलाज बताया जाता है। इस तरह से किसानों को लूटने का यह नया फंडा है। रोग होगा तो फसल डॉक्टर, फसल वैज्ञानिक, दवा कंपनियां, दवा की दुकानें आदि का जन्म होता है। अत: किसान अपने खेतों से तंदुरुस्त फसल की छंटाई कर अपना बीज खुद तैयार करें।

फसल में लगने वाले प्रमुख कीट

फली बेधक:- फली बेधक कीट इस फसल का प्रमुख कीट है। इस कीट की सूंडियां फलियों में दाना पड़ते समय फली में छेद करके दाने को खा जाती हैं।

कीट नियंत्रण

- 5 लीटर देशी गाय का मट्ठा लेकर उसमें 15 चने के बराबर हींग पीसकर घोल दें। इस घोल को बीजों पर डालकर भिगो दें तथा 2 घंटे तक रखा रहने दें। उसके बाद बोवाई करें। यह 1 एकड़ घोल की बोवनी के बीजों के लिए पर्याप्त है ।
- 5 देशी गाय के गौमूत्र में बीज भिगोकर उनकी बोवाई करें। ओगरा और दीमक से पौधा सुरक्षित रहेगा।
- ओगरा या दीमक से बचाव हेतु बोवाई करने से पहले बीजों को कैरोसिन से उपचारित करें।
- 250 मिली नीम (नीम पानी बनाने के लिए 25 किलो नीम की पत्तियों को अच्छी तरह से पीसकर 50 लीटर पानी में तब तक उबालें जब तक कि 20-25 लीटर पानी न रह जाए। उसके बाद उसे उतारकर छानकर उपयोग करें) को 25 मिली माइक्रो केझाइम के साथ मिलाकर उपयोग करें एवं सुपर 1 गोल्ड मैग्नीशियम 1 किग्रा 45 रुपये प्रति बैग 200 लीटर पानी में घोलकर माइक्रो केझाइम के साथ मिलाकर अच्छी तरह से तर-बतर कर छिड़काव करें। इससे कीट नियंत्रित होंगे।
- 500 ग्राम लहसुन, 500 ग्राम तीखी हरी मिर्च लेकर बारीक पीसकर 150-200 लीटर पानी में घोलकर फसलों पर छिड़काव करें। इससे इल्ली रस चूसक कीड़े नियंत्रित होंगे।
- बेशरम के पत्ते 3 किलो एवं धतूरे के फल तोड़कर 30 लीटर पानी में उबालें, आधा पानी शेष बचने पर उसे छान लें। इस पानी में 500 ग्राम चने डालकर उबालें। ये चने चूहों के बिलों के पास शाम के समय डाल दें। इससे चूहों से निजात मिलेगी ।

कटाई

मूंग की फलियां गुच्छों में लगती हैं। पूरी फसल में फलियों को 2-3 बार में तोड़ लिया जाता है।

उपज

वर्षाकालीन फसल 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तथा ग्रीष्मकालीन फसल 12-15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक हो जाती है।

भंडारण

दाने को अच्छी प्रकार सुखाकर जब उसमें नमी का प्रतिशत 10-12 रह जाए तब इसे भंडार में रखना चाहिए। ●

मौसम परिवर्तन से समस्त विश्व के देश प्रभावित हुए हैं। विभिन्न देशों की पारिस्थितिकी एवं नियमित कृषि फसलें भी प्रभावित हुई हैं। यह उन देशों के लिए एक बहुत बड़ी आपदा है जो कृषि प्रधान देश हैं और जहां के अधिकांश किसान मौसमी वर्षा पर निर्भर रहते हैं। महाराष्ट्र, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, बिहार एवं राजस्थान तथा दक्षिण भारत में अब तक लगभग चार लाख किसानों ने आत्महत्याएं की हैं। मौसम की मार ने उनकी फसलों को बर्बाद कर दिया था। वे कर्ज के दलदल में फंसते चले गये और अंत में उन्होंने आत्महत्या जैसा दुखद रास्ता चुना। भारत जैसे गौरवशाली देश में कृषिक्षेत्र का दायरा घटना और इतनी बड़ी संख्या में किसानों द्वारा आत्महत्याएं करना बहुत बड़े शर्म की बात है।

मौसम परिवर्तन का पर्वतीय कृषि पर प्रभाव

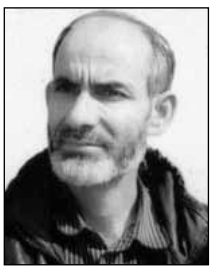

ताज रावत

सन् 1975-76 के दौरान उत्तराखण्ड में भयंकर सूखा पड़ा, गर्मी इतनी भयंकर होती थी कि पेड़ की छांव में भी चैन नहीं मिलता था। खेत, बाग-बगीचे सूख गए थे। गेहूं की फसल और धान की फसल से भी कुछ राहत नहीं मिल पायी, वरना पर्वतीय किसान खेती बाड़ी से सालभर का अनाज उगा ही लेते थे। सन् 1970 के दशक में तो समय पर वर्षा नहीं होती थी। मौसम के परिवर्तन से धरती का नमीपन एवं आस-पास के वनों की ठंडक धरती से बुरी तरह से गायब हो चुकी थी। इससे पर्वतीय लोग बहुत उदास एवं दुखी थे। एक तो खेतों पर जीतोड़ मेहनत करना और पर्याप्त अनाज न उगने की घटना ने सभी को आश्चर्य में डाल दिया था। बहुत से धार्मिक लोग इसे देवता का प्रकोप मान रहे थे। क्योंकि पूजा पाठ करने एवं देवताओं को पूजने के बाद भी मौसम का रूठना जारी था। लेकिन गांव के पढ़े-लिखे एवं सेना के अवकाशप्राप्त लोग इस बात को मानने लगे थे कि मौसम में कुछ गड़बड़ अवश्य है। ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे बुरा हाल छोटे स्कूली बच्चों का था जो जलक्षेत्रों के सूख जाने से अत्यंत मायूस थे।

इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ वर्ष परेशानी झेलने के बाद सन् 1980 के दशक में पर्वतीय आबादी का एक बड़ा भाग मैदानों की ओर तेजी से पलायन करने लगा। मकान, खेत-बागवान सब पीछे छूटने लगे। यह भी एक सच्चाई है कि सन् 1960 एवं 1970 के दशक में विश्व में चारों ओर वर्षा के वनों का कटान बड़ी तेजी से शुरू हो गया था। इन्हीं वर्षा के वनों से धरती की नमी बनी रहती थी। इनके कटान से धरती का पर्यावरण बड़ी तेजी से प्रभावित हुआ। ब्राजील, अफ्रीका महाद्वीप, आस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, मलेशिया, पापुआ न्यू गिनी, थाईलैंड, वियतनाम आदि देशों में वर्षा के वनों का विविध प्रकार से कटान किया गया। सन् 1972 तक अकेले ब्राजील के वर्षा के वनों का 1,00,000 वर्ग किलोमीटर भाग काटकर नष्ट कर दिये गये थे। इन्हें कृषि कार्यों एवं फार्महाउस (रांचेज) बनाने एवं टिम्बर उद्योग स्थापित करने के लिए काटा गया था। इसी प्रकार वेनेजुएला, कोलंबिया, पेरू, इक्वेडोर, बोलीविया, गुयाना सूरिनाम एवं फ्रेंच गुयाना तक के वर्षा के वनों का एक बड़ा भाग कृषि, इमारती लकड़ी, सड़क-निर्माण, डाम बनाने एवं सोने की खानों के लिए काटा गया था। इसके अलावा घाना, नाइजीरिया, केन्या, तजानिया, युगांडा, जायरे, कांगो बेसिन, गेबन, कैमरून आदि देशों के वर्षा के वनों का एक बड़ा हिस्सा पहले ही काटा जा चुका था। इस सबका सम्मिलित प्रभाव वैश्विक पर्यावरण को दुष्प्रभावित करने के लिए काफी था।

आज विश्व के देशों में विविध प्रकार के दो तिहाई वन काटकर नष्ट किए जा चुके हैं। अमेजन का विशाल बियावान लगभग 60 लाख वर्ग किलोमीटर भूभाग में फैले हुए हैं। इसका एक विशाल भाग ब्राजील में है। इन विशाल वनों का 20 लाख वर्ग किलोमीटर वनभाग काटकर नष्ट किया जा चुका है। पापुआ न्यूगिनी, फिलीपीन्स, आस्ट्रेलिया, थाईलैंड, मलेशिया इंडोनेशिया के लगभग 60 प्रतिशत वनभाग कटकर नष्ट किए जा चुके हैं। इन वनों के कटने से अन्य देशों का पर्यावरण बड़ी तेजी से प्रभावित हुआ है।

वर्षा के वन धरती के फेफड़े

वर्षा के वन धरती के फेफड़े (Lungs of the Earth) कहे जाते हैं। क्योंकि यह बड़ी मात्रा में

ऑक्सीजन छोड़ते हैं और CO_2 शोषित करते हैं। इस प्रकार धरती पर आक्सीजन एवं CO_2 का संतुलन बना रहता हैं। अमेजन के विशाल वन धरती के फेफड़े है जो लाखों वर्ग किलोमीटर तक फैले हुए हैं। अन्य देशों में जो छिटपुट वर्षा के वन बचे हुए हैं उनको भी जीवित रखना बहुत जरूरी है क्योंकि वहां का पर्यावरण संतुलित रखने में उनकी बहुत बड़ी भूमिका होती है। यह धरती पर नमी बनाए रखते हैं तथा मानसूनों के ठीक समय पर संचालित होने में मदद करते हैं।

यह बात वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुकी है कि 3000 वर्ष पूर्व बोलीविया का अमेजन क्षेत्र अफ्रीका के सवाना घास के मैदानों जैसा लगता था। वहां आज जैसे विशाल घने वन क्षेत्र नहीं थे। लेकिन बाद के परीक्षणों से पता चला कि ये क्षेत्र तब न तो घास के मैदान थे, न ही जंगल थे। केवल विशाल शुष्क सपाट क्षेत्र थे। यहां पर बाद के वर्षों में स्वत: ही प्राकृतिक रूप से सघन वनीकरण हुआ था। अमेजन के इस विशाल भूभाग में सैकड़ों आदिम जातियां रहती थीं। अब यह विशाल वनक्षेत्र 60 लाख वर्ग किलोमीटर तक फैले हुआ है। इन वनों को जीवित रखना बहुत जरूरी हैं। इन विशाल वनों का 30 प्रतिशत भाग कटकर नष्ट हो चुका है।

पर्वतीय कृषि का खात्मा

सन् 1970 से 1980 के मध्य तक घोड़ा ढुंगी जैसे वनों से घिरे क्षेत्र में रबी एवं खरीफ दोनों फसलों में कमी आने लगी थी। यह क्षेत्र सघन, उपजाऊ एवं लहलहाती फसलों का स्वर्ग था। जमीन-सूखने लगी, मिट्टी फटने लगी थी। यह दृश्य अत्यंत दारूण एवं करुणाजनक था। पर्वतीय किसानों का दिल बैठ गया था कि अब क्या किया जाए। क्योंकि उस भूमि के हर क्षेत्र का यही हाल था। इसके बाद सारखोली, कैरणी, उकसरी, बाडयूं, सड़खेत, रड़खेत, मरखुड़ी, हैड़ीधार, ढौंडा, डंगधार, बज्रखट, धरकोट, शिलवाणी, कटरासियारा, गबाखोली, पितरोड़ू, बस्त्रा, जैसी उपजाऊ भूमियों में फसल का दायरा घटने लगा जिससे सिमतोली गांव के किसानों में वीरानी छाने लगी। पानी की डिग्गी जो कि गांव का सदाबहार पेयजल क्षेत्र था वह भी धीरे-धीरे सूखकर पतला हो गया था। गांव के लोग सोचते थे कि पानी धरती के अन्दर ही अन्दर कहीं विलुप्त हो रहा है। सिमतोली गांव पांच भागों में बंटा हुआ है। खलियाण धार, रावतखोला, मुल्ली तिबारी, पटवाल खोला एवं पुराना गांव। पुराना गांव में कम परिवार रहते हैं लेकिन उन्हें पानी और चरान की कमी नहीं है। दूसरी ओर मुल्ली तिबारी, पटवाल खोला, कोठा भीतर, रावत खोला महादेव वाले पानी में जाते हैं, जो विगत वर्षों में लगभग सूखकर पतला हो चुका हैं। खलिहाणधार वालों का गोदियूं एवं गोगिनी क्षेत्र में अपना सुंदर पानी है। लेकिन यह भी 1970 के दशक से धीरे-धीरे सूखने लगा था। इस दौरान छोटी-छोटी नदियों के किनारे जो नालियां बनाकर खेतों की सिंचाई होती थी वह भी धीरे-धीरे सिमटने लगी थी। क्योंकि नदी में पूरा पानी ही नहीं आता था। किसी वर्ष बरसात के मौसम में जोरदार वर्षा हो गयी तो दूसरे वर्ष छिटपुट वर्षा हो करके बादल वापस लौट जाते थे। अत: सारा मौसम शुष्क एवं नीरस बन गया था। गोदियूं का जो सुंदर पेयजल क्षेत्र है से ही गोगिनी नदी निकलती है जो कटरा सियारा तक जाती है। आज वह सब खेत सूखकर वीरान पड़ चुके हैं। आज से 38 वर्ष पूर्व यह क्षेत्र जो अनाज एवं धनधान्य से पूर्ण था चारों ओर हलचल रहती थी। आज सूना-सूना एवं वीरान हो चुका है। यहां पर इन छोटी नदियों पर घराट भी चलते थे। इसका अर्थ यह है कि उस समय नदियों में पर्याप्त जल था। आज मौसम परिवर्तन के कारण वह सूखकर लुप्त हो चुका है। इस नदी का नाम गाडपार नदी भी है जिसके जलीय पौधे एवं अन्य वनस्पतियां देखने योग्य हैं। किसी जमाने में यहां पर सुन्दर चौड़े खेत हरीभरी फसलों से लहलहाते थे, अपनी बहार बिखेरते रहते थे। आज यहां सब वीरान एवं सुनसान नजर आने लगा है। नदियों में काला बांसा एवं गाजर घास की झाड़ियां उग आयी हैं। यह बढ़ती गरमाहट का संकेत हैं।

पक्षी अवलोकन के स्थल

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इन फसलों के सहारे नमभूमियों के किनारे विविध प्रकार के रंग-बिरंगे पक्षी एवं वन्यजीव जीवित रहते थे जो हर प्रकार से मानव मन का खूब मनोरंजन करते थे। गांव की गौरैया गेहूं एवं धान की फसल पर अपना जीवन व्यतीत करती थी। एक विशाल जनसंख्या में गांवों के एक छोर से दूसरे छोर तक उड़ान भरती थी। यह सब दृश्य देखने लायक होते थे। गांव एवं खेतों की रौनक के साक्षी यह पक्षी अब बहुत कम नजर आते हैं।

यहां की घाटियों की कृषि भूमियों में रंग-बिरंगे पक्षी जैसे लाल चिड़िया, वन गौरैया, सुरड़ी, मलेऊ, तीतर, बटेर, चकोर, चांचुड़, बुलबुल, मैना, दो पूंछों वाला पक्षी कलजींठ, नीला कराऊं, बदामी कराऊं, घुगूती, मसूरी घुगूती, हुप्पो, कठफोड़वा, गुथनी, टेलर बर्ड, तोता, पीत पक्षी, डोम कौआ, हनी बर्ड, मैना, नील पक्षी, जलमुर्गी, वनमुर्गी, बगुला, किंगफिशर, ग्रीन काइट, कोयल, ब्लैक रिवर बर्ड, व्हाइट नेक, व्हाईट पैराडाइज, रेड पैराडाइज, पिस्टी, स्काईलार्क, ब्लैक सिंगर, रेड थ्रोट बुलबुल, मुसचिड़िया खेतों के आसपास झाड़ियों में खूब मिलते थे। अब यह कभी कभार ही मिल पाती हैं। यहां पर्वतीय नदी घाटियों, चरागाहों एवं खेतों के झुरमुटों में रंग-बिरंगे पक्षियों का संगीत व्याकुल कर देता था। वसन्तागमन के मौसम में वनों में, घाटियों में, चरागाहों में, खेतों एवं खलिहानों में रंगबिरंगे पक्षी सुंदर गीत गाते थे। ग्रामीण लोग अब घर बार छोड़कर देहरादून, ऋषिकेष, रूड़की, हरिद्वार, मेरठ, गाजियाबाद फरीदाबाद, दिल्ली, मुंबई आदि छोटे-बड़े शहरों में बस चुके हैं। गांवों में अब केवल 10-12 बुजुर्ग लोग दिखायी देते हैं। गांव की गलियां सूनी पड़ गयी हैं।

वन्य जीवों के सुंदर शरण स्थल

यहां शिवालिक की पहाड़ियां बाघ, भालू के लिए विख्यात हैं। यह दोनों जीव यहां के सर्वाधिक हिसांत्मक जीव हैं। मानव एवं छोटे बच्चों पर हमला करते रहते हैं। इसके अलावा सियार, कुरसियाल, खरगोश, जंगली सूअर, हिरन यहां पर फसलों को नुकसान करते रहते हैं। जबसे कृषि वीरान हुई है तबसे जंगली सूअर, बंदर, लंगूर एवं सियार का आतंक बढ़ गया है। यह जीव अब घरों तक आने लगे हैं। इसके अलावा चूहा एवं सांप की आबादी कई गुना बढ़ी है।

हल्की पनीली भूमि या सिमांध भूमियों में रंग-बिरंगी तितलियां गीली मिट्टी में बैठकर अंडे देती हैं एवं अपनी आबादी बढ़ाती हैं। यह दृश्य मन को लुभाते अवश्य हैं लेकिन खेती की आस धूमिल होती जाती है। चट्टानों एवं दीवालों पर विविध प्रकार के कीट-पतंगे विशाल आबादी में दिखायी देते हैं और यहां फिर से अपनी आबादी बढ़ाते हैं। जब सघन वर्षा होती थी तो इनका शोर सारे वातावरण में गूंजता था, अब चारों तरफ वीरानी छायी रहती है।

आश्चर्यजनक पेड़-पौधों की दुनिया

हमारी कृषि भूमियों एवं कृषि वनों के आसपास विविध प्रकार की आश्चर्यजनक वनस्पतियां बरसात के मौसम में या बसन्तागमन में बड़ी संख्या में दिखायी देती हैं। इनमें अधिकांश जड़ी-बूटियां औषधियों में प्रयोग की जाती हैं। इनमें जंगली फल एवं शाक भी शामिल हैं। वन औषधियों में जंगली तुलसी, अजवाइन बूटी, बिच्छू घास (कंडाली), लिंगुंडा, खन्तुड़ा, कड़वी, रौंसी घास, नदी का पौदीना, तूंगा, जल तूंगा, छींक्नी, किनगोड़ा, हिसालू, नीलकंठी, चिरैता, सालब मिसरी, भुयां काफल, वनशा, समोया, पुर्वत, फ्यूंलड़ी, लिली हिमालयन लिली, किलमोढ़ी, घिलमोड़ी, लुपिया, दूधिया, कमलियां, लोई चट्टा, पत्थर चट्टा, पापड़ी, वनोगला, पिंजाड़, मसलचना, खबरशुला, तायडू, गेंठी, आर्किड, चोरू, जंगली मेथी, जंगली जखिया, जंगली भंगजीरा, खैणा, अंजीर, बेडू, काफल, बुरांश दालचीनी, पाजा, घिरमोली, किरमोली आदि जड़ी-बूटियां अच्छी जीवनदायी औषधियां होने के साथ-साथ ग्रामीणों के आहार में भी शामिल फल एवं शाक हैं। विशेषकर जंगली शाक-सब्जियां, फल एवं जड़ी-बूटियां शरीर को खाज-खुजली एवं कैंसर जैसे रोगों से बचाते हैं।

गांवों में अधिकांश बुजुर्ग लोग जंगली सब्जियां एवं फलों को बहुत पसंद करते हैं। पर्यावरण की मार ने उनके सपनों पर पानी फेर दिया है। बढ़ती गर्मी के कारण जंगलों में पाए जाने वाले भेरणा (जंगली अंगूर), खैंणा, तिमला एवं गूलर समय पर फल ही नहीं देते थे। हैड़ा, आंवला, तूंगा एवं जल तूंगा पर्वतीय भागों से गायब हो रहा है। किनगोड़ा, हिसालू की झाड़ियों एवं काफल के वृक्षों को समस्त पर्वतीय भागो से अशिक्षित एवं अज्ञानी लोग नष्ट कर रहे हैं। यह तीनों ही सुंदर फलदार वृक्ष हैं और शिवालिक की पहाड़ियों पर खूब मिलते हैं।

मौसम परिवर्तन से समस्त विश्व के देश प्रभावित हुए हैं। विभिन्न देशों की पारिस्थितिकी एवं नियमित कृषि फसलें भी प्रभावित हुई हैं। यह उन देशों के लिए एक बहुत बड़ी आपदा है जो कृषि प्रधान देश हैं और जहां के अधिकांश किसान मौसमी वर्षा पर निर्भर रहते हैं। महाराष्ट्र, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, बिहार एवं राजस्थान तथा दक्षिण भारत में अब तक लगभग चार लाख किसानों ने आत्महत्याएं की हैं। मौसम की मार ने उनकी फसलों को बर्बाद कर दिया था। वे कर्ज के दलदल में फंसते गये और अन्त में उन्होंने आत्महत्या जैसा क्रूर रास्ता चुना। भारत जैसे गौरवशाली देश में कृषिक्षेत्र का दायरा घटना और इतनी बड़ी संख्या में किसानों द्वारा आत्महत्याएं करना बहुत बड़े शर्म की बात है, क्योंकि कृषि एक सदाबहार रोजगार एवं विशाल आबादी की आर्थिक रीढ़ है। अतः कृषि को हर प्रकार से सजीव एवं हराभरा रखा जाना चाहिए।

कृषि हमारे देश का गौरव है। इसके विकास से राष्ट्र का विकास कर देशवासियों में संपन्नता लायी जा सकती है। इस हेतु हमारे राजनीतिज्ञ, योजनाकार, कृषि वैज्ञानिक एवं विशेषज्ञ गंभीरता से सोचें और खेतीबाड़ी को घाटे का सौदा न बनने दें, ताकि किसानों का मनोबल बढ़े। ●

कृषि चौपाल पत्रिका डाक से मंगाने के लिए सदस्यता फॉर्म

कृपया उचित स्थान पर सही (✓) का निशान लगाएं और अन्य विवरण साफ-साफ अक्षरों में सही-सही भरें।

☐ वार्षिक सदस्यता - 180/- ☐ द्विवार्षिक सदस्यता - 350/- ☐ पंचवार्षिक सदस्यता - 750/-

☐ आजीवन सदस्यता - 5100/- (डाक खर्च अलग से देय होगा)

मैं अपना चेक/डिमांड ड्राफ्ट संख्या ..... तिथि ..... / ..... / .....

बैंक व ब्रांच ..... पर आदेशित, रुपये .....

मात्र का (**'कृषि चौपाल'**, दिल्ली के पक्ष में) संलग्न कर रहा हूं।

मेरा विवरण इस प्रकार है:-

नाम .....

पता .....

..... पिन .....

फोन/मोबाइल ..... ई-मेल .....

दिनांक ..... हस्ताक्षर .....

कृपया ध्यान दें: सदस्यता-फॉर्म के साथ चेक या डिमांड ड्राफ्ट **'कृषि चौपाल'** के नाम देय होगा। चेक या ड्राफ्ट के पीछे अपना नाम, पता व फोन नंबर अवश्य लिखें। डिमांड ड्राफ्ट अथवा मनीऑर्डर- कृषि चौपाल, सी-355, तृतीय तल, गली नं.-9, वेस्ट विनोद नगर, दिल्ली-110092 के पते पर भेंजे। फोन: +91-991040-6059, ईमेल: E-mail: krishichaupal@gmail.com

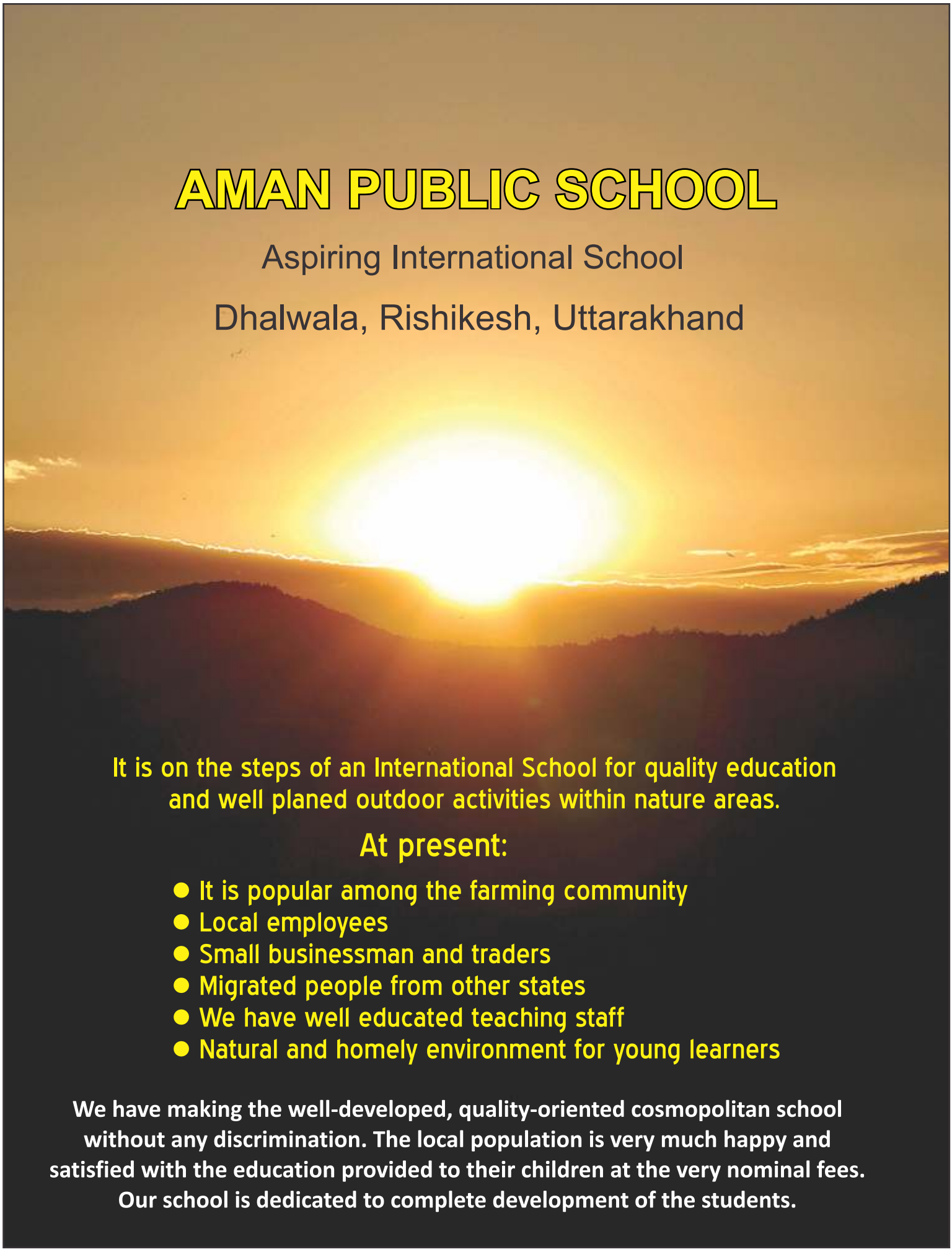

AMAN PUBLIC SCHOOL

Aspiring International School

Dhalwala, Rishikesh, Uttarakhand

It is on the steps of an International School for quality education and well planed outdoor activities within nature areas.

At present:

- It is popular among the farming community
- Local employees
- Small businessman and traders
- Migrated people from other states
- We have well educated teaching staff
- Natural and homely environment for young learners

We have making the well-developed, quality-oriented cosmopolitan school without any discrimination. The local population is very much happy and satisfied with the education provided to their children at the very nominal fees. Our school is dedicated to complete development of the students.

RNI REGD. NO.: DELHIN/2007/20953